श्रीः ।

विशेषांक की विशेषता ।

यद्यपि आज कल हिन्दी के पत्रों के विशेषांक निकालने की प्रथा बहुत अधिक बढगयी है और सभी पत्रसञ्चालक इस बात की चेष्टा करते हैं कि हमारे विशेपाङ्क की विशेपता की धाक बंधजाय। सभी पत्रसञ्चालक चाहते हैं कि देश के वडे से वडे नेताओं के लेख हों और वडे से वडे कवियों की मनोहर कवितायें हमारे पत्र को सुशोभित करें। पत्रसञ्चालकों को लेख और कविता संग्रह करने में कितनी कठिनाई पडती है इस का अनुभव तो भुक्तभोगी सञ्चालक ही करसकते हैं। लेखों और कविताओं की भिक्षा के लिये वारंवार द्वार खटखटाने पडते हैं और किसी कवि का यह वचन कि—"सब से भला है सूम जो द्रुत देइ जवाब" स्मरण आजाता है। समय थोडा होता है और अच्छे लेखकों और कवियों के लेख प्रायः विळम्ब से मिलते हैं अतएव सम्पादकों को योग्यतानुसार क्रमबद्ध लेखों के रखने का अवसर बहुत कम मिलता है विवश होकर उन्हें

" विवेकवित्पाणिनिरेकसूत्रे श्वानं युवानं मघवानमाह "

[अर्थात्— विवेक के जाननेवाले महर्षि पाणिनिजी ने भी श्वान (कुत्ता) युवान और मघवान (इन्द्र) को रखा है।] की नीति का अवलम्बन करना पडता है आजकल यह एक विशेपता देखने में आती है हिन्दीपत्र के विशेपाङ्कों की। दूसरी विशेपता यह देखने में आती है कि साधारण अङ्कों का आकार दूसरा होता है और विशेपाङ्कों का आकार ईश्वर जानें क्यों दूसरा बनादेते हैं जिसका परिणाम यह होता है कि साधारण अङ्कों के साथ फाइल में विशेपाङ्क रखा नहीं जासकता। इसी प्रकार और विशेपतायें भी विशेपाङ्कों में पायी जाती है जिनका वर्णन करना अनावश्यक है किन्तु हमारा यह वैदिकसर्वस्व का विशेपाङ्क किसी अन्य विशेपता के अभिप्राय

से नहीं यह अपने उद्देश्यसिद्धि की विशेषता के लिये निकाला गया है। वैदिकधर्म के अनुयायियों के लिये वैदिकरीति से आरम्भ से अन्त तक जिस में सब विधियाँ हुई हों ऐसा दिव्यदेश बना और उसी वैदिकविधि से प्रतिष्ठा हुई इसी खुशी में यह विशेषाङ्क निकाला गया है। मोहमयी नामवाली मुम्बई नगरी, भारत के सब से अधिक बडी और प्रसिद्ध नगरी न केवल व्यापार में ही किन्तु पवित्रता में भी आज पवित्र दिव्यदेश, के द्वारा वैदिकधर्मावलम्बियों का तीर्थस्थान बनगयी है इसी खुशी में आज वैदिकसर्वस्व का यह विशेषाङ्क निकाला गया है। इस विशेषाङ्क में महामना मालवीय जी और महात्मा गान्धी जैसे राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं से लेख मंगाने की चेष्टा नहीं की गयी और न अपने प्रसिद्ध हिन्दी कवियों को ही अधिक कष्ट दिया गया है, हां इस विशेषाङ्क में दिव्यदेश सम्बन्धी और विशेषकर मुम्बई के दिव्यदेश सम्बन्धी वार्तों को यथासम्भव लिखने की चेष्टा की गयी है और अर्चावतार सम्बन्धी ज्ञातव्य विषयों पर जो आचार्यचरणों के सिद्धान्त और मत हैं उन का वर्णन भी व्याख्यान के रूप में दिया गया है इस अङ्क की यह विशेषता है, हां बीचबीच में कुछ भक्तों और भावुकों की कवितायें भी आगयी हैं जो भक्तों और भावुकों के ही पढने योग्य हैं। पत्र के अन्त में सम्पादकीय विचार के रूप में कुछ टिप्पणियां दीगयी है जो प्रायः सभी पत्रों की पूर्तिकारक होती हैं सारांश यह कि यह विशेषाङ्क दिव्यदेश की प्रतिष्ठा के महोत्सव के उपलक्ष्य में निकाला गया है। अतएव इस अङ्क में आपको दिव्यदेश सम्बन्धी ज्ञातव्य वार्तों की विशेषता मिलेगी। आशा है पाठकगण क्षमा करेंगे क्योंकि अन्यान्य पत्रों के समान इस विशेषाङ्क में अन्यान्य विषयों की विशेषता नही मिलेगी। शुभम्।

श्रीः ।

॥ वैदिकसर्वस्व का विशेषांक ॥

बम्बई का दिव्यदेश ।

" अमृतायते हि स्तुतयः सुकर्मणाम् "

भारत की सर्वश्रेष्ठ जनधनपरिपूर्ण बम्बई नगरी में सभी जाति और सभी सम्प्रदाय के धनी मानी लोग वसते हैं। इस नगरी में व्यापार का व्यामोह इतना अधिक है कि इस का नाम ही " मोहमयी" रखा गया है। यद्यपि इस नगरी में सभी जाति के लोग हैं तथापि जनसंख्या में हिन्दू जाति के लोग अधिक हैं और उनके भाव भी पूर्णरूपेण हिन्दूसंस्कार के दिखाई देते है। जहां जनसमूह रहने लगता है वहीं उसको अपने धर्मकर्मनिर्वाहार्थ उन के उपकरणों की रचना भी करनी पडती है। बम्बई में भी सभी जाति के लोगों ने अपने अपने धर्मस्थानों की रचनायें कर रखी हैं। यहां के हिन्दू अधिवासी जिस प्रकार संख्या में सब से आगे हैं उसी प्रकार अपने धर्म के निर्वाहार्थ अपने देवताओं के स्थानों के निर्माण, प्रबन्ध और उन में जाकर अर्चा पूजा करने में भी किसी जाति से पीछे नही हैं। बडे बडे प्रसिद्ध स्थानों में पर्वोत्सवों के समय इतना अधिक जनसमूह एकत्रित होता है कि देश के साधारणतः बडे बडे तीर्थस्थानों में भी उससे अधिक भीड देखने में नही आती। इस से प्रतीत होता है कि यहां के हिन्दू व्यापारी और व्यवसायी होते हुए भी धर्म कर्म में अधिक श्रद्धावान् है। बाबुलनाथ महादेवजी का स्थान कितना सुन्दर और विशाल है, श्रावण के महीने में वहां कितने अधिक हिन्दू अर्चापूजा और दर्शन करने के लिये जाते है इस की संख्या करना कठिन है; महालक्ष्मीजी का स्थान कितनी दूर है और शहर के भीतर के लोगों को वहां जाने आने में कितना श्रम होता है यह स्पष्ट ही है किन्तु फिर भी सर्वसाधारण

हिन्दुओं के अतिरिक्त नित्य ही विशेषकर शुक्रवार को अपने व्यापार से निवृत्त होकर १० और ११ बजे रात में कभी कभी सवारी न मिलने पर पैदल जाकर लोग श्रीमहालक्ष्मी की पूजा कर अपने मनोर्थ को सफल मनाते और मानते हैं । इतना ही नहीं वैष्णवसम्प्रदाय के भी इतने सुन्दर और विशाल विभवशाली मन्दिर हैं और उन में भगवान के तथा आचार्यवर के दर्शनों में कितनी बडी भीड होती है और नर और नारी अपने इष्टसिद्धि के लिये कितनी भावभक्ति रखते हैं इस को वही जानसकता है जो एकवार भी उन मन्दिरों में समय पर गया हो । इस बम्बई नगरी की परमप्रसिद्ध मुम्बादेवी और भूलेश्वरनाथ के स्थान और मान की तो शान ही निराली है। इस भूलेश्वर मुहल्ले में तो मन्दिरों की इतनी अधिक संख्या है कि लोग इस स्थान को देख मथुराजी का स्मरण करने लग जाते हैं । यह सब कुछ होने पर भी, दक्षिण भारत के देव मन्दिरों में जाने पर भक्त जनों को जो अपूर्व आनन्द होता है वह अकथनीय है । इस विशाल नगरी में उस प्रकार का एक भी मन्दिर नहीं है यह अभाव भावुक महानुभावों के हृदयों में खटकने की बात थी ।

अपने भक्तों के मनोर्थ भगवान् सदैव पूर्ण करते हैं । इस कार्य में कोई युग और कोई समय बाधक नहीं होता । तदनुसार बम्बई में रहनेवाले महानुभावों के मनोर्थ भी भगवान ने सिद्ध किये और इस बम्बई नगरी को—इस मोहमयी व्यापारी नगरी को सदैव के लिये भगवान् श्रीवेङ्कटेशजी ने श्री आचार्यचरणों के द्वारा समस्त सनातनधर्मावलम्बी हिन्दुओं का विशेषकर श्रीवैष्णवसम्प्रदायावलम्बी महाशयों का तीर्थस्थ न बनादिया और देश के अन्य दिव्यदेशविभूषित तीर्थस्थानों के समान ही यह समुद्र में नौका के समान तरती हुई नगरी— बम्बई भी परमपावन पवित्र तीर्थस्थान बनगयी । दिव्यदेश की रचना और स्थापना से इस नगरी का कितना बडा अभाव पूरा हुआ है

इसका अनुमान इसी से किया जासकता है कि आज बम्बई के हिन्दूजनसमूह में आनन्द उमड रहा है, नित्य ही विशेपकर पर्वों और उत्सवों के दिन और समय में वरसते हुए पानी में दिन और रात में अधिक से अधिक संख्या में सभी सम्प्रदाय और सभी विचार के छोटे वडे, गरीब और अमीर स्त्री और पुरुप सवारियों पर और पैदल श्रीवेङ्कटेश भगवान के दर्शनों के प्रेमी पूर्णश्रद्धा और भक्ति के साथ आते जाते दिखाई देरहे हैं। मन्दिर में इतनी अधिक भीड होती है फिर भी कितनी शान्ति और सुव्यवस्था से लोगों को दर्शन होते हैं इस को देखकर लोगों के हृदय की सन्तुष्टि का परिचय मिलता है। बम्बई निवासी हिन्दूसमूह श्रीवेङ्कटेश भगवान के परमभक्त हैं जहां जाइये, जिस सनातनधर्मावलम्बी का स्थान देखिये या दूकान देखिये आपको श्रीवेङ्कटेश भगवान का चित्र अवश्य ही दिखाई देगा। इसी श्रद्धा और भक्ति ने, यही भक्तों की भावना ने सदा की भांति इस समय भी इस नगरी में श्रीवेङ्कटेश भगवान को अर्चावतार के रूप से प्रकट होने के लिये विवश किया है। भक्तवत्सल भगवान को चित्रों की आराधना करनेवाले अपने भक्तों को प्रत्यक्ष दर्शन देने के लिये ही आज बम्बई के दिव्यदेश में अर्चावतार धारण करना पडा है और इसी कारण से इस दिव्य-देश की रचना और स्थापना का श्रेय मैं उन्हीं भगवद्भक्तों को देना चाहता हूँ जिन्होंने अपने आराध्यदेव भगवान् श्रीवेङ्कटेश के चित्रों में सदा श्रद्धा और भक्ति रखी, जिनके हृदय में सदा किसी न किसी रूप में श्रीवेङ्कटेश भगवान के दर्शनों की लालसा बनी रहती थी और जिन्हों ने आज अपने मनोर्थ को सिद्ध हुआ देख बम्बई नगरी को हृदयानन्द के समुद्र में प्लावित कर रखा है जिसे देख संसार में किस भगवद्भक्त का हृदय प्रसन्न हुए विना रहेगा और किस के मुख से न निकल पडेगा कि—

" अप्राप्य नाम नेहास्ति धीरस्य व्यवसायिनः । "

(क-स- सागर)

अर्थात्— इस संसार में दृढ व्यवसायी—उद्योगी के लिये कोई वस्तु अप्राप्य- न मिलसकनेवाली नहीं है ।

इस समय जिस बम्बई के दिव्यदेश के प्रतिष्ठामहोत्सव ने बम्बई को आनन्दपूर्ण कर रखा है और आज भारत के दिव्यदेशों में एक प्रमुख दिव्यदेश की संख्या बढ रही है उस का आरम्भिक वृत्तान्त सुनादेना कदाचित् अप्रासङ्गिक न होगा । आज से ३३ वर्ष पूर्व विक्रमीय संवत् १९५१ में श्रीकाञ्चीप्रतिवादिभयङ्करमठाधीश्वर जगद्गुरु श्री १००८ श्री स्वामी अनन्ताचार्यजी महाराज संयोगवश इस नगरी में पधारे थे उस समय यहां के श्रीवैष्णव महानुभावों ने श्रीचरणों में अपनी आन्तरिक इच्छा प्रकट की थी कि जिस प्रकार इस नगरी में- भारत की सब से अधिक प्रसिद्ध और जनधनपरिपूर्ण नगरी में अन्यान्य सम्प्रदायों के अनेक प्रसिद्ध देवस्थान हैं उसी प्रकार हम श्रीसम्प्रदायावलम्बियों की उपासना के लिये श्रीवैष्णवसम्प्रदाय के एक विशाल मन्दिर की आवश्यकता है । श्रीचरणों ने आश्वासन दिया था और कहा था कि अवश्य ही इस विषय का उपयोग होना चाहिये किन्तु श्रीचरणों के पधारने के पश्चात् इस विषय की अधिक चर्चा नहीं रही। दूसरी यात्रा में जिस समय विक्रमीय संवत्१९६८ में श्री १००८ श्री जगद्गुरु महाराज पधारे उस समय पुनः इस की चर्चा चली किन्तु मन्दिर की रचना का निश्चय न होसका ।इतना अवश्य हुआ कि उसी समय से आचार्यचरण ने एक मकान में भगवान् की अर्चा पूजा होने की व्यवस्था कर दी । पश्चात् कभी कभी आचार्य चरण बम्बई में पधारने लगे, अन्ततो गत्वा दिव्यदेश मन्दिर के लिये ११५०००)में एक स्थान लेलिया गया और (फनसवाडी नं- ८८में) मन्दिर का सूत्रपात होगया । यह भूमि सन् १९१४ इसवीय में खरीदी गयी थी और २२०० चौरसवार भूमि का परिमाण था । किन्तु मुम्बई नगरी की तपस्या पूरी नहीं हुई थी, भगवद्भक्तों के हृदयों में कुछ पूर्णरूपेण पुण्य उदय

नहीं हुआ था अतएव भूमि खरीद जाने के वाद भी लगभग ६ वर्षों तक मन्दिर का कार्य आरम्भ नहीं हुआ किन्तु लगन लगी रही और सन् १९२० इसवीय में नीव खोदने का शुभ समय आगया धीरे धीरे दिव्यदेश मन्दिर की शास्त्रानुसार रचना होने लगी और श्रीचरणों के अथक परिश्रम और आदेश से बम्बई नगरी ही के नहीं प्रत्युत श्री चरणों के अनन्यभक्तों ने अहमदावाद, दक्षिणहैदरावाद आदि स्थानों से भी आर्थिक सेवा की। यद्यपि मन्दिर का विस्तार उस के सडक पर के द्वितीय गोपुर आदि का निर्माण होना अभी शेष है तथापि मन्दिर के अङ्ग पूरे होगये और उस के प्रतिष्ठा का शुभ समय आगया। मन्दिर की रचना में कई लक्ष रुपये खर्च हुए हैं और इस में सन्देह नहीं कि आज इस मन्दिर की रचना से, इस के रचयिता की दैवी शक्ति और महत्त्व से इस नगरी के हिन्दूमात्र विशेषकर श्री वैष्णव बन्धुओं के हृदय में आनन्द तो छा ही रहा है साथ ही इस नगरी की महिमा और शोभा भी कम नहीं बढी। कल की मोहमयी व्यापारी बम्बई नगरी आज हिन्दूमात्र का पवित्र तीर्थस्थान बन गयी है क्या यह कम हर्ष की बात है।

दिव्यदेश की रचना में श्रीचरणों के आदेशानुसार समस्त कार्य शास्त्रानुसार किये गये हैं आरम्भ ही से कर्षणादि क्रियायें यथाविधि की गयी हैं और मूलमन्दिर की नीव यथाविधि उस स्थान तक खोदी गयी है जबतक जल नहीं निकल आया। यह साधारण सी बात न थी इसी कारण केवल गर्भगृह के नीव भरने में ६००००) साठ हजार रुपये खर्च हुए हैं। प्रतिष्ठा भी वैदिक विधि के अनुसार ही योग्य आचार्यों के द्वारा बडी सावधानी और समारोह के साथ की गयी और इसी कारण प्रतिष्ठा महोत्सव में भी कम खर्च नहीं पडा।

दिव्यदेश मन्दिर बनगया विधिविहित प्रतिष्ठामहोत्सव भी भली भांति मनालिया गया अब सारी बम्बई नगरी के नरनारी जनसमूह

दर्शनों के लिये पूर्णिमा के समुद्र के समान उमड रहा है और रातदिन झुण्ड के झुण्ड दर्शक दर्शनों के लिये आरहे हैं। यथाविधि नित्य और नैमित्तिक पर्वोत्सव होने लगे हैं और वरसात की कठिन परिस्थिति में भी सकुशल ब्रह्मोत्सव पूरा होगया। जगद्गुरु महाराज की कृपा और परिश्रम से आज बम्बई में यह दिव्यदेश रूपी वैकुण्ठधाम की चर्चा चारों ओर चलरही है और यह विचार होने लग गया है कि भविष्य में इस दिव्यदेश मन्दिर का प्रबन्ध कैसे होगा और कौन करेगा। अभी गत तारीख २६ जून रविवार सन् १९२७ इसवीय को मन्दिर के प्रबन्ध के सम्बन्ध में ही बम्बईनिवासी श्रीवैष्णवमहानुभावों की एक सभा दिव्यदेश मन्दिर की चौक में श्री १००८ श्रीजगद्गुरु महाराज की अध्यक्षता में हुई थी और दिव्यदेश मन्दिर का प्रबन्ध एक ट्रष्ट की अवधानता में करने की इच्छा श्रीचरणों ने प्रकट की और ट्रष्ट के नियम आदि बनाने एवं ट्रष्टियों के निर्धारित करने पर विचार करने के लिये एक समिति बनादी गयी है आशा है कि यह समिति शीघ्र ही अपना कर्तव्य पूरा कर के श्रीचरणों की आज्ञा का पालन करेगी। समिति के सञ्चालक सुचतुर और परम भगवद्भक्त सेठ श्री श्रीनिवास जी बजाज का परिश्रम प्रशंसनीय है।

मन्दिर जितनाही सुन्दर विशाल है और उस में वैदिक विधि के अनुसार अर्चा पूजा का प्रबन्ध जितनाही सुचारु रूप से किया गया है उतनाही उस का खर्च भी कम नहीं है। कई सहस्र रुपये मासिक का उस का खर्च अनुमान किया गया है क्योंकि दैनिक साधारण खर्च के अतिरिक्त उस में पर्वों और उत्सवों पर तथा ब्रह्मोत्सव के अवसर पर अधिक खर्च होने की सम्भावना है। इस लिये जितनी आवश्यकता मन्दिर की थी उस से अधिक आवश्यकता है उस के सुप्रबन्ध और उसकी अर्चापूजा और पर्वोत्सवों के खर्च के दृढ प्रबन्ध की। जो समिति ट्रष्ट पर विचार करने के लिये बनायी गयी है वही समिति आर्थिक प्रश्न को भी हल करेगी और आशा है कि इस स्थान का इतना अच्छा और दृढप्रबन्ध होगा कि कभी किसी बात की न अडचन पडेगी

और न किसी प्रकार का विघ्न ही उपस्थित होगा। भगवान् श्रीवेङ्कटेश अपने भक्तों के मनोर्थ सिद्ध करेंगे इस में सन्देह नहीं और जिस प्रकार यह दिव्यदेश मन्दिर पूर्ण वैदिकविधिविहित तैयार हुआ है और जिस प्रकार इस की प्रतिष्ठा शास्त्रविधि से की गयी है उसी प्रकार इस का प्रबन्ध भी विधिविहित और दृढ रूप से होगा यही आशा है।

श्रीः ।

प्रतिष्ठा–महोत्सव ।

आज भारत की सर्वश्रेष्ठ नगरी मुम्बई में प्रतिष्ठा महोत्सव की धूम मचरही है । श्रीवैष्णव-सम्प्रदायावलम्बी ही नहीं इस नगरी के हिन्दूमात्र विशेषकर सनातनधर्मावलम्बी हिन्दुओं के उत्साह का सुधासिन्धु श्रीविङ्कटेश भगवान के प्रतिष्ठामहोत्सव रूपी पूर्णचन्द्र की ओर बडे वेग से उमडरहा है । चारो ओर सडकों और गलियों में झुण्ड के झुण्ड नरनारी वृद्ध और बालक, अशिक्षित और शिक्षित, धनी और निर्धन सभी प्रतिष्ठामहोत्सव के उत्सव में भाग लेने के लिये आतुर दिखाई देरहे हैं । जिस ओर जाइये नगरी के कोने कोने में आज भारत की सौभाग्यवर्ती नगरी मुम्बई के सौभाग्यस्वरूप प्रतिष्ठामहोत्सव की ही चर्चा चलरही है । मुम्बई के सुचतुर धर्मात्मा निवासी, दिव्यदेश की स्थापना और प्रतिष्ठामहोत्सव के सर्वस्व, जिन महापुरुष आचार्यचरण ने अपना सर्वस्व इन्ही परोपकारी कार्यों के लिये अर्पण कर रखा है उनकी भूरि भूरि प्रशंसा और मुम्बई नगरी निवासियों की ओर से

उन जगद्गुरु महाराज के प्रति कृतज्ञता प्रकट कररहे हैं । आज दिव्यदेश के प्रतिष्ठामहोत्सव ने मुम्बई को सचमुच भारत की महिमा स्वरूप पवित्र तीर्थस्थान बनादिया है, आज भारत के प्रायः सभी प्रान्त के निवासी उत्साही श्रीवैष्णवगण, विद्वान्, बुद्धिमान् और धनवान् सेठ साहूकार इस तीर्थस्थान में प्रतिष्ठामहोत्सव रूपी पर्व में उपस्थित हो अपने आपको कृतकृत्य और पवित्र मान रहे हैं । आज मुम्बई निवासी हिन्दू मात्र के मुख पर विशेषकर श्रीवैष्णवमहानुभावों के मुख पर अपूर्व आनन्द की छटा छारही है, लोगों के हृदय आनन्द से फूल रहे हैं मुख से उन का प्रकटकरना असम्भव होरहा है । जिस दिव्यदेश रचना की लालसा ३० वर्षों से भी पहले से चलरही थी, जिस की रचना के लिये आज से १३ वर्ष पहले भूमि खरीदी गयी थी और जो देवस्थान आज ८ वर्षों से बनरहा था उस दिव्यदेश मन्दिर की प्रतिष्ठा हो रही है । उस मन्दिर का प्रतिष्ठामहोत्सव मनाया जारहा है यह सुनकर नगरी के आबाल वृद्ध वनितायें हिन्दू ही नहीं पारसीय जनसमूह भी आनन्दसिन्धु में डुबकियाँ लगारहा है । सचमुच आज इस दिव्यदेश की प्रतिष्ठा ने इस नगरी की प्रतिष्ठा बढा दी है और इस लिये नगरी के समस्त निवासी इस प्रतिष्ठामहोत्सव को अपनी नगरी की प्रतिष्ठा बढाने वाला प्रतिष्ठामहोत्सव समझ रहे हैं । जिन पुण्य और पवित्रात्माओं ने मुम्बई जैसी व्यापारप्रधान नगरी में, भारत की गौरवस्वरूप समुद्रमध्यवर्तिनी दर्शनीय नगरी में भगवान् श्रीवेङ्कटेश के दिव्यदेश मन्दिर की रचना की लालसा प्रकट की थी और जिन के उदार विचार और अनन्यभक्ति ने बीज बोकर इस नगरी को दिव्यदेश स्थान बनने का गौरव प्रदान किया है उन में से कुछ पवित्रात्मायें आज इस संसार में नहीं हैं, आज वे आत्मायें अपनी अभिलाषाओं की पूर्ति को देखने के लिये अवश्य ही दिव्य विमानों पर आकर प्रतिष्ठा महोत्सव का अपूर्व आनन्द अनुभवकर रहीं होंगी । जिस प्रकार अपने

प्राणस्वरूप, अपने पुत्ररूप इष्टदेव के राज्याभिषेक देखने की लालसा पूरी न होते हुये महाराज दशरथ परमपद को पधार गये थे और वनवास से लौटने पर जब भगवान् मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र का राज्याभिषेक हुआ था तो महाराज दशरथ की आत्मा ने विमान पर आकर राज्याभिषेकोत्सव को देख अपने मनोर्थ की पूर्ति का अनुभव किया था आज उसी प्रकार उन श्रीवैष्णवमहानुभावों की आत्मायें भी जिन की इच्छा और भक्ति की दृढता का यह दिव्यदेश फल है और जो आज इस संसार में नहीं है अवश्य ही हम लोगों के चर्मचक्षु के अगोचर में विमानों पर आकर इस प्रतिष्ठामहोत्सव को देख रहीं होंगी और अपने सङ्कल्प अपनी इच्छा और भक्ति की पूर्ति से आनन्दित हो रहीं होंगी। उक्त पवित्रात्माओं में यदि हम सेठ खेमराजजी का नाम स्मरण करें तो कदाचित् असङ्गत न होगा और आत्मायें– भागवत जनों की आत्मा.यें तो सब ही स्मरणीय और आदरणीय है।

मनुष्यप्रतिष्ठित दिव्यदेशों के लिये यह आवश्यक विधान है कि उन नवीन दिव्यदेशों का सम्बन्ध किसी देवप्रतिष्ठित अथवा सिद्धप्रतिष्ठित दिव्यदेश से कराया जाय। इसी विधि की पूर्ति के लिये श्रीकाञ्ची के ब्रह्मदेवप्रतिष्ठित दिव्यदेश से " श्रीयथोक्तकारी " भगवान की मूर्ति एवं तिरुनांगूर के पुरुषोत्तम भगवान के मन्दिर से"चक्रसुदर्शन" की मूर्ति विधिपूर्वक पैदल मार्ग से लायी गयी हैं। इस महत्त्व को सर्वसाधारण जनता ने अपने उत्साहपूर्ण स्वागत से, अपने अलौकिक प्रेम और भक्ति से नगरी के नरनारियों और बच्चों के हृदयों में इस प्रकार अङ्कित करदिया है कि चिरकाल तक बना रहेगा। यद्यपि प्रतिष्ठामहोत्सव का कार्य बहुत पहले से आरम्भ होगया था तथापि शास्त्रविधि की प्रतिष्ठा का कार्य ज्येष्ठ शुक्ल पञ्चमी शनिवार तदनुसार ता. ४ जून सन् १९२७ ईसवीय की प्रातःकाल से आरम्भ हुआ। कार्यक्रम और उस का संक्षेप वर्णन इस प्रकार है:—

ज्येष्ट शुक्र ५ शनिवार को प्रात.काल प्रतिष्ठायज्ञ के उपलक्ष्य में यज्ञशाला में स्वस्तिवाचन हुआ और तत्पश्चात् अद्वैतविद्वान् और वैदिक विधियों में परमयोग्य मैसूरनिवासी श्रीस्वामी रङ्गभट्टाचार्यजी महाराज का आचार्य रूप से वरण किया गया और यज्ञशाला के लिये, ४ ऋत्विक् का विधान किया गया जिन के नाम इस प्रकार हैं:—

आचार्य— श्री रङ्गस्वामिभट्टाचार्यजी महाराज— मैसूर।
ऋत्विक्— श्री ए, रङ्गभट्टाचार्यजी महाराज— श्रीरङ्गम्।
" श्री केशवभट्टाचारी— मैल्कोटा।
" श्री कुट्टि सामण्णभट्टाचारी— श्रीरङ्गपट्टम्।
" श्री रङ्गराजभट्टाचार्य— श्रीरङ्गम्।

वरण के अनन्तर प्राणप्रतिष्ठा, महान्न प्रतिष्ठा आदि याज्ञिक विधियाँ हुईं। यज्ञशाला के दर्शकों की इतनी अधिक भीड थी कि मन्दिर में मनुष्य ही मनुष्य दिखाई देते थे और सभी के मुख पर आनन्द और अपूर्व आनन्द लूटने की लालसा एक एक से बढके दिखलाई पडती थी। इसी दिन मध्याह्नोत्तर दिन में ३ बजे काञ्ची से पैदलमार्ग से चलकर आये हुए, दिव्यदेश के मूलस्तम्भस्वरूप ब्रह्म-दिव्यदेश से मुम्बई के श्रीवेङ्कटेश भगवान के दिव्यदेश को सम्बन्धित करनेवाले "यथोक्तकारी भगवान" बडे ही उत्साहपूर्ण जुलूस के साथ मोहमयी—मुम्बई नगरी में पधारे। "यथोक्तकारी भगवान्" का स्वागत जिस प्रकार मुम्बईनिवासी नरनारियों ने हृदय खोलकर किया है उस के लिखने में लेखनी असमर्थ है। बडे बडे बूढे और बुद्धिमान् लोग कहते हैं कि आज तक ऐसा धार्मिक स्वागत जो हृदय से विह्वल होकर किया गया हो हम लोगों ने कभी नहीं देखा और न कानों से सुना। वाह रे मुम्बई नगरी! तू धन्य है, तेरे सौभाग्य की प्रशंसा कहां तक की जाय, तूने आज ऐसे सुपूत उपजाये हैं कि सचमुच तेरे लिये वे "पुत्र" (नरक से रक्षा करने वाले) कहलाने योग्य हैं जिन की

अटूटभक्ति, निरन्तर प्रेम और दृढता ने श्रीवेङ्कटेशावतार धारण कर तेरी गोद में दिव्यदेश के दिव्यभवन में आज भगवान् श्रीवेङ्कटेश जी अपने वैकुण्ठधाम से आरहे हैं। इसी खुशी में आज इन ही वैकुण्ठवासी भगवान् की प्रतिष्ठामहोत्सव में समस्त तेरी सन्तान मस्त है और समस्त संसार तेरी मुक्तकण्ठ से प्रशंसा कर रहा है। काञ्ची से आकर आज की रात्रि को "यथोक्तकारी भगवान्" ने गीतापाठशाला में विश्राम किया। भगवान् की सवारी गीतापाठशाला तक पहुंचाकर यज्ञशाला और मन्दिर प्रतिष्ठा के शास्त्रीय कार्यों का विधान होने लगा। मृत्संग्रहण अङ्कुरारोपण आदि पुण्याहवाचन पूर्वक कार्य किये गये। ये सब याज्ञिक कार्य रात्रि में ११ बजे तक होते रहे और नगरनिवासी नरनारी दर्शकों की अपार भीड का तांता अविच्छिन्न रूप से बंधा रहा।

ज्येष्ट शुक्ल ६ रविवार को प्रातःकाल ८ बजे गीतापाठशाला स्थान से भगवान् की सवारी अपने दिव्यदेशस्थान (फनसवाडी) में पधारेगी इस की सूचना नगरनिवासियों को पहले ही से मिलचुकी थी। जिन मार्गों से होकर भगवान् की सवारी निकलने को थी समस्त हिन्दू समाज अपने अपने स्थानों पर पहले ही से डटरहे थे और एकमन और एकाग्रध्यान से अपने अपने हृदयाङ्गण में भगवान् की मूर्ति का भव्य दर्शनीय दर्शन कर रहे थे और आशा लग रही थी कि भगवान् की सवारी अब आयी अब आयी। उधर गीतापाठशाला के सामने भक्तों प्रेमियों और भावुकों का समूह आनन्द के समुद्र के समान् बढ रहा था। ठीक ७ बजे के कुछ देर बाद गीतापाठशाला से भगवान् की सवारी निकली। कितनी धूमधाम से यह सवारी निकली और मुम्बईनिवासी जनता के उपर इस का कैसा अच्छा धार्मिक प्रभाव पडा वर्णन करने योग्य नहीं है। इस जुलूस में अनेक बातें उल्लेखनीय थीं। गाडी पर नगाडे बज रहे थे, सजे हुए घोडे हाथी और नानाप्रकार के बाजे अपनी अपनी मधुरध्वनि करते हुए चल रहे थे। अनाथालय के स्वयं-

सेवक और स्काउटदल की प्रशंसा करने की आवश्यकता नहीं वे तो दिखला रहे थे कि आज यदि सचमुच भारत अनाथ दशा में न होता तो इस के सुपूत देश की कैसी सेवा और उस का कैसा अच्छा प्रबन्ध करते । जुलूस में श्रीवेङ्कटेश्वर प्रेस की भजनमण्डली का भजनीभढङ्ग भी हम लोगों के लिये निराला था, जिस भक्ति और प्रेम में मण्डली निमग्न थी उसे उस समय देखतेही बनता था । भगवान् की सवारी का यथार्थ कथन करना तो सम्भव नहीं किन्तु जुलूस का दिग्दर्शन इस प्रकार कराया जासकता है कि सब से अगाडी गाडियों पर विजयनगाडे बजरहे थे और उन की प्रतिध्वनि से मानों मुम्बई नगरी भगवान् का स्वागत कर रही थी, गाडियों के पीछे मङ्गलमूर्ति गजराज शोभायमान अपनी मन्द गति से शिक्षा देरहा था कि—

" शनैरर्थाः शनैः पन्थाः शनैः पर्वतलङ्घनम् ।
शनैर्धर्मश्च कामश्च व्यायामश्च शनैः शनैः ॥ "

अर्थात्— धीरे धीरे अर्थ की सिद्धि होती है, धीरे धीरे मार्ग चलकर इष्टस्थान की प्राप्ति होती है, धीरे ही धीरे चढते चढते लोग पर्वत को लॉघ जाते है, धीरे धीरे धर्म में प्रगति उत्पन्न होती है, धीरे धीरे भगवान् की भक्ति से कामना की सिद्धि होती है और इस [illegible] में विजयी होने के लिये अपने धार्मिक शरीर को बलिष्ठ बनाने के लिये शास्त्रविधि से नवधा भक्तिरूपी व्यायाम को धीरे धीरे करना चाहिये । इसी गजराज पर शंख चक्र के निशान मानों दोनों ओर धर्मध्वज और विजयध्वज की कीर्ति प्रकट कर रहे थे । गजराज के पीछे " प्रतिष्ठामहोत्सव " इन शब्दों से सुशोभित कामदार साइनबोर्ड था जिस को पढकर साधारण अनभिज्ञ जन भी विना किसी से पूछे ही जुलूस का अभिप्राय जानेलेते थे। साइनबोर्ड के पीछे सोने चांदी के भूषणों से सजे हुए और रङ्गविरङ्गे एक से एक बढ के घोडों का समूह

था जिस के पीछे मानों घोड़ों की चञ्चलता को रोकनेवाली अद्भुत लगाम का काम देनेवाली शान्तिपूर्ण भजनों की गाती हुई राव साहब श्री सेठ रङ्गनाथ जी के श्रीवेङ्कटेश्वर प्रेस की भजनमण्डली चल रही थी। भजनमण्डली के पीछे सोने चादी के अनेक आशावल्लभ, झण्डों और पताकाओं की कतारें चलरहीं थीं और अनाथालय के बालकों का सनाथविगुल बजरहा था और मानों ससार से कह रहा था कि आज हम राजनीतिक क्षेत्र में भले ही अनाथ माने जॉय किन्तु हम भारतवासियों का यह धार्मिक सनाथ विगुल फिर भी स्वतन्त्ररूप से बज रहा है और जिस का जी चाहे अपने बल की परीक्षा करने के लिये सामने आजाय। हम फिर भी उसे शान्तिपाठ पढाकर ऐसा बनादेंगे कि वह कहेगा कि—

" ज्वर इव मदो मे व्यपगतः "

और भारत के प्रति कृतज्ञता प्रकट कर कृतकृत्य हुए विना न रहेगा। इन अनाथ बालकों के विगुल के पीछे दक्षिणभारत—मद्रास की मनोहर शहनाई और नाथमुनि बैण्ड इतनी सुन्दर और मनोहारिणी ध्वनि से बजते थे कि उन के शब्दार्थों को न जाननेवाले भगवद्भक्त जन भी ऐसे मुग्ध हो रहे थे कि जिनको देख कर मृगमोहन की कल्पना स्मरण आजाती थी। उक्त बैण्ड के पीछे दक्षिण और उत्तर भारत के विद्वानों की मण्डली और आचार्यों एव श्रीवैष्णवों से परिवेष्टित वह तपोमूर्ति वह मुम्बई को कृतार्थ करनेवाली परब्रह्म परमात्मा की शक्ति और हृदय में सदैव ध्यान करने योग्य अनुपम आचार्यचरण जगद्गुरु १००८ श्री काञ्ची प्रतिवादिभयङ्कर मठाधीश्वर भगवान् श्री अनन्ताचार्य जी महाराज नङ्गे शिर और नङ्गे पैरों से धीरे धीरे चलकर मुम्बई नगरी को अपने चरणरजों से पवित्र कर रहे थे और मुम्बई की मोहमयी भूमि चरणरजों से अपने को कृतकृत्य कर रही थी। श्रीचरणों के साथ की विद्वन्मण्डली श्रीसम्प्रदाय के प्रबन्धपाठ और स्तोत्रों का पाठ कर रही थी

और मानों यह शिक्षा दे रही थी कि बैठते, उठते, चलते फिरते और सोते जागते भगवान् के गुणानुवाद को करते रहना चाहिये, मानो दूसरे रूप में इशारा कर रही थी कि—

" प्रतिश्वास सविश्वास राम भज दिने दिने ।
को विश्वासः पुनः श्वास आगमिष्यति वा नवा ॥ "

अर्थात्—प्रत्येक श्वास के साथ राम राम भजते रहो— हरि का गुण गाते रहो कोई विश्वास नहीं कि एक के बाद दूसरी श्वास आवेगी या न आवेगी। श्रीचरणों को आगे किये हुए जरी के काम से सुसज्जित शंख, चक्र, छत्र. चामर और आशावल्लमों से परिवेष्टित यथोक्तकारी भगवान् का विमान चल रहा था श्रीचरणों को आगे कर मानों भगवान् शिक्षा देरहे थे कि—

" हरे रुष्टे विधिस्त्राता विधौ रुष्टे हरिस्तथा ।
हरौ रुष्टे गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन ॥ "

अर्थात्— महादेव जी महाराज के नाराज होने पर ब्रह्मा जी रक्षा कर सकते हैं, ब्रह्मा जी के नाराज होने पर विष्णुभगवान् रक्षा कर सकते हैं और विष्णुभगवान् के नाराज होने पर आचार्यचरण गुरुवर रक्षा कर सकते हैं किन्तु आचार्यचरणों के रुष्ट होने से अथवा आचार्यचरणों से विमुख होने से मनुष्य की कोई रक्षा नहीं कर सकता— विना आचार्यावतार के धर्म की रक्षा नहीं हो सकती और धर्म की रक्षा के विना अपनी रक्षा का होना असम्भव है -। भगवान् का विमान स्थान स्थान पर ठहरता हुआ चलरहा था और भक्तजन अपने अपने स्थानों के पास पूजा, आरती भेंट और दक्षिणादान करते थे। जिन महानुभावों ने आरती पूजा की है उन के कुछ नाम इस प्रकार हैं—

१ श्रीयुत— रामकृष्णदास सागरमलजी.
२ " हरिनन्दराय फूलचन्दजी.
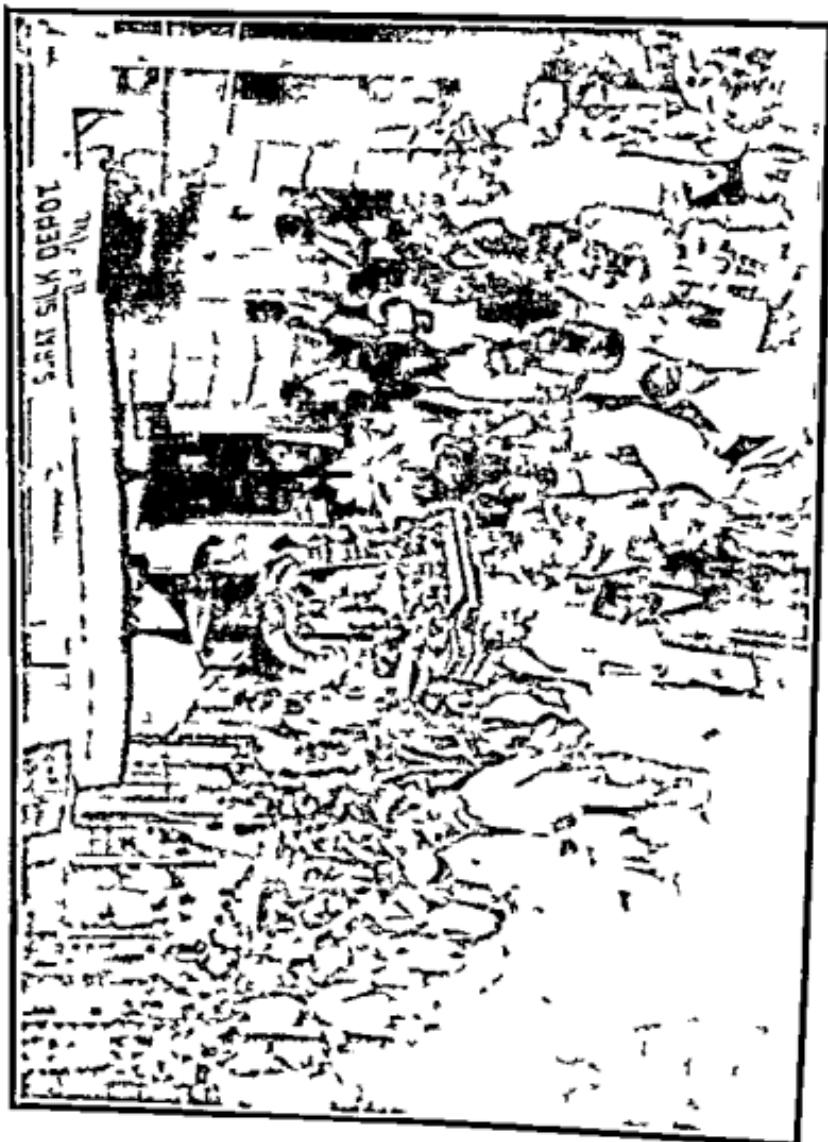
एक गोष्ठी ।

३ श्रीयुत– नारायणदासजी- मन्दसोरवाले.
४ " रामदयालजी बजाज.
५ " सूर्यमल लच्छीनारायणजी.
६ " आशारामजी.
७ " रामसुख मोतीलालजी
८ " गङ्गाराम हीरालालजी.
९ " केसरीमल आनन्दीलालजी.
१० " हरिप्रसाद भागीरथजी.
११ " नन्दलालजी.
१२ " किशनलाल हीरालालजी.
१३ " शिवलाल मोतीलालजी.
१४ " गणेशरामजी मूछाल.
१५ " बालारामजी.
१६ " कृष्णलाल छोगालालजी.
१७ " खेमराज श्रीकृष्णदासजी.
१८ " रामजीलाल बाबूलालजी.
१९ " आशाराम लालाभाई.
२० " छोटूलाल जुहारभाई.
२१ " बलदेव राठी.
२२ " रामनारायण बलदेवदासजी.
२३ " रामदयालजी सोमानी.
२४ " मन्नालाल भगीरथजी
२५ " रामजीवनजी भियानी.
२६ " सागरमल गुलाबरायजी नेमानी.
२७ " ताराचन्द्र घनश्यामदासजी.
२८ " रूडमल लच्छीराम चूरूवाला.

२९ श्रीयुत— हरलाल भीमराजजी.
३० " सण्डीमहाजन ऐसोसियेशन.
३१ " पृथ्वीराज भगवानदासजी.
३२ " रामजी—खत्री.
३३ " फूलचन्दजी मोतीलालजी.
३४ " खुसालचन्दजी गोपालजी.
३५ " रामचन्द लच्छीनारायणजी.
३६ " शिवराम सदारामजी.
३७ " रामदयाल सोमानी— कम्पनी.
३८ " मथुरादास गोविन्ददास मन्त्री.
३९ " पञ्चमुखी हनुमानजी का स्थान.
४० " वैद्य केदारनाथजी— भूलेश्वर.
४१ " रणछोरजी का मन्दिर.
४२ " जगदीशजी का मन्दिर.
४३ " नरसी भगत की रगूबाई
४४ " बालकृष्ण हरिसहायजी केडिया.
४५ श्रीमती गङ्गाबाई
४६ श्रीयुत— रामगोपाल हीरालालजी
[illegible]

किन्तु फिर भी जो पोलिस अधिकारी साथ साथ प्रबन्ध कर रहे थे उनकी चतुराई और स्काउट के सञ्चालकों के प्रबन्ध से कहीं कोई दुर्घटना नहीं हुई और जुलूस स्वच्छन्द रूप से चलता रहा। भगवान् के विमान के पीछे मद्रास की भजनमण्डली थी जिस के मधुरस्वर श्रोताओं को मुग्ध कर रहे थे और उन के शब्दार्थों को न जानते हुए भी श्रोतागण बड़े चाव से उनके भजन और भाव से प्रसन्न हो रहे थे। सब के पीछे हमारे भारत की महिमा बढानेवाली माताओं, बहिनों और बेटियों की मण्डली थी, ये भगवद्गुणानुवाद में लीन बरसते हुए पानी में अपनी सुधबुध भूली हुई हरिभक्ति की सुधाधारा में निमग्न हो रही थीं, यह मण्डली पीछे थी किन्तु भगवद्भक्ति में किसी से पीछे न थी, यह मण्डली बतला रही थी कि पीछे रहने से कोई छोटा नहीं हो सकता, सेना का नायक पीछे ही रहता है और सब से बडा होता है हा भगवद्भक्ति में पीछे नहीं रहना चाहिये और योंतो हम भारतीय महिलायें, हम पतिप्राणमहिलायें अपने को अपने प्राणपति की छाया के समान पीछे ही रहने में अपने को सोभाग्यवती ओर सुखी मानती है। हमारा आदर्श, अन्त करण की परीक्षा और धर्म पतिपरायणा होना है न कि पतिस्पर्धिनी होना। हम चाहती है कि अपने प्राण पतियों को अपने भाइयों और बेटों को आगे करके अपने धर्म की वेदी पर सर्वस्व अर्पण करने के लिये चलें ओर उनको अपने कर्तव्य से च्युत न होने दें ऐसा नहो कि वे हमारे पीछे रहकर अपने सत्यपथ से विचलित हो जॉय क्यों कि वे ही हमारे प्राण है, वे ही हमारे आधार है और उन्ही पर हमारा जीवन निर्भर हे। वह मण्डली मानों नयी सभ्यता को शिक्षा देकर कह रही थी कि सुधरी हुई बहिनों तुम यदि बडी बनना चाहती हो, अपने कुटुम्ब का देश का और समाज का सुधार करना चाहती हो तो ससारयुद्ध में अपनी सेना के पीछे किन्तु ऊचे स्थान ऊचे विचार से देखो तो' तुम्हारे बेटे, तुम्हारे भाई और पति—

है। जो परमात्मा ससार के समस्त पदार्थ में, मिट्टी पत्थर इत्यादि में भी समाया हुआ है क्या वही, सर्वव्यापक परमात्मा अर्चा से भाग जाता है ? कभी नहीं। वह मूर्तियों में भी व्यापक है। यह कल्पना कदापि विरुद्ध नहीं है। वास्तव में यह आक्षेप वही करते हैं जो हमारी पूजापद्धति से अनभिज्ञ है। देवार्चन करते समय हम "पत्थराय नम" नहीं कहते। हम कहते हे 'ईश्वराय नम, नारायणाय नम।' वह परमात्मा हमारी उन अर्पित वस्तुओं को स्वीकार करता है। क्या सर्वान्तर्यामी परमात्मा हमारे हार्दिक भावों को नहीं समझता है। क्या उसे यह पता नहीं कि किस समय किस भाव से किस स्थान पर हम क्या कर रहे हैं? निराकार के उपासक जब अग्नि में घी डालकर स्वाहा कहते हैं तो क्या भगवान अपना भाग लेने को दौड न पडते होंगे और क्या हमारे इस प्रकार अर्चन को ग्रहण न करते होंगे ? करते होंगे और अवश्य ग्रहण करते होंगे।

जो लोग साधन और एकाग्रता नहीं कर सकते ऐसे लोगों के उद्धार के लिये परमात्मा अर्चावतार लेते है। जो लोग निराकार के उपासक होने का दावा करते है और उसी का ध्यान करते है उनसे पूछिये कि आप किस का ध्यान करते हे। ध्यान और स्मरण अनुभूत वस्तु का होता है। विना देखी चीज का ध्यान नहीं होसकता। पुस्तकों में ही आप स्मरण का अर्थ उठा देखें तो आपको यह बात भले प्रकार विदित हो जायगी। सम्कारजात ज्ञान का ही नाम ध्यान है, स्मरण है। प्रत्येक मनुष्य जानता है कि जब अपने स्वर्गवासी माता पिता का स्मरण होआता हे तो उनका रूप आखों के सामने फिर जाता है। किसी वस्तु को एक मिनट तक देखकर उसका ध्यान आधी मिनट तक हम कर सकते है फिर घण्टों तक भलेप्रकार दर्शन करके क्यों न अपनी शक्ति बढायें।

आजकल अर्चा रूप की पूजा विधिवत नहीं होती । प्राय मन्दिरों में अव्यवस्था देखी जाती है । पूजा करनेवाले इस बात पर ध्यान नहीं देते कि पूजा के पहले मानसिक पूजा की आवश्यकता है । पहले मन से तुलसी चन्दनादि चढ़ाना चाहिये फिर अर्चनादि की विधि पूरी करनी चाहिये । किन्तु आजकल विधि विधान का ध्यान रखे बिना ही तुळसी चन्दनादि चढ़ा देते हैं । यदि हम विधिवत पूजन के पश्चात् अच्छी तरह दर्शन कर के अभ्यास बढ़ा लेंगे तो अर्चा रूप सामने न होने पर भी हमें भगवान के दर्शन मिल सकेंगे । यह ध्यान की प्रथमावस्था है । इस प्रारम्भिक योग की सिद्धि नहीं हो सकती । इस प्रकार विधि विहित प्रेम पूर्वक साधना करनेवाला, पाप क्षीण होकर, अन्त में उसी मूर्ति में लीन होजायगा । हमारे यहां ऐसी कथाएँ भी है कि भक्तजन पूजा करते करते सब के सामने मूर्ति में लीन हो गये । जो ऐसा नहीं करते उन्हें सिद्धि भी नहीं हो सकती । अमूर्तस्वरूप का दर्शन प्रारम्भ में हो ही नहीं सकता ।

- अर्चारूप भगवान सर्व सहिष्णु हैं । वे हमारे जितने अपराध क्षमा कर देते हैं उतने अपराध कोई दूसरा क्षमा नहीं करता । यह प्रथा इतनी सुलभ और सुकर है कि जो पालन करनेवाला है वह हमारे हाथ की रोटी अगोरता है । जिस की कृपा से जलवृष्टि होती है वह भगवान हमारे हाथ से जल लेने स्नान करने की अपेक्षा करता है । यही भगवान की इच्छा है । वे भक्तजनों के वश में रहना चाहते हैं । ऐसे अर्चारूप की पूजा करनेवाले हम और लोगों के सामने किसी प्रकार भी मूर्ख नहीं ठहराये जा सकते ।

हमारे कार्य शारीरिक और आत्मिक दोनों सारपूर्ण होते है । भगवान ने शरणागति के लिये प्रणिपति करना बताया है, इससे भी यह दोनों प्रयोजन सिद्ध होते हैं । जब तक दण्डायमान न हो जायँ तब

तक प्रणिपात नहीं हो सकता । पात का अर्थ है अपने को नीचे गिरा देने का, किन्तु यह केवल शारीरिक क्रिया हुई । प्रणि उपसर्ग इसलिये लगाया गया है कि यह शारीरिक नमन ही पर्याप्त नहीं है । मनसा वाचा भी प्रणमन होना चाहिये । तभी साष्टांग प्रणाम होता है । इस प्रणमन से शारीरिक लाभ भी है और आत्मिक भी । महाराष्ट्र में बालकों को एक ही श्वास में अधिक से अधिक प्रणाम करने के लिये उत्तेजित और प्रोत्साहित किया जाता है । जो बालक एक श्वास में अधिक संख्या में प्रणाम करने में समर्थ होते हैं उन्हें इनाम दिया जाता है । इस प्रकार व्यायाम और प्रणाम का मेल होता है ।

शास्त्रों में लिखा है कि भगवान सर्वव्यापक हैं, फिर भी भक्तों की इच्छा पूरी करने के लिये वे एक स्थान पर प्रकट होते हैं । सब जानते है कि काष्ट में अग्नि मौजूद है — व्याप्त है, किन्तु वह हर समय प्रकट नहीं होती और न लकडी को जलाती ही है । रगड खाने पर ही काष्ट से अग्नि पैदा होकर दाह करती है । इसी प्रकार प्रतिमा में आचार्यों की अर्चा और भक्ति से परमात्मा प्रकट होते हैं । सर्वव्यापक होने पर भी परमात्मा सब के सामने नहीं आते । परमात्मा सर्वव्यापक हैं तो भी ईश्वरचिन्तन और प्रार्थनादि के लिये एक स्थान चुनना ही पडेगा । आप बाजार में खडे होकर प्रार्थना कीजिये, लोग आप को पागल बतायेंगे । किन्तु मन्दिर में विधिपूर्वक प्रार्थना करने पर कोई पागल नहीं कह सकता । यद्यपि पूजार्चन के लिये घर घर में प्रबन्ध किया जा सकता है पर यह कार्य इतना सुलभ नहीं है । सब लोग सांसारिक कार्य में इतने व्यस्त है कि उन्हें स्वस्थ बैठकर भोजन करने का भी अवकाश नहीं मिलता, फिर उनसे यह आशा कैसे की जासकती है कि सब लोग यथाविधि पूजन कर सकेंगे ।

अर्चकस्य तपोयोगात् अर्चनस्यातिशायनात् ।
आभिरूप्याच्च बिम्बानां देव सान्निध्यमृच्छति ॥

अर्थात् अर्चक के तप से, अर्चन के अतिशय से, प्रतिमाओं के सौन्दर्य से देव का सान्निध्य होता है । इस में पहली दो बातें घरों में असम्भव हैं। इसीलिये विशेष स्थान बनाये गये हैं । ऐसे स्थान जहां शास्त्र की विधि से सब कार्य सम्पन्न होता है और जहां पवित्रता और एकाग्रता मिल सकती है । यही कारण है कि यह कहा गया है कि जिस घर और ग्राम में भगवान की मूर्ति नहीं है वह श्मशान तुल्य है? और वहां वास न करना चाहिये । यह कहने की आवश्यकता नहीं कि शुद्ध बातों में देव दर्शन से अकथनीय आनन्द प्राप्त होता है ।

हमारे शास्त्रों में नगरनिर्माण के जो नियमादि बताये गये हैं उन में देवालय को आवश्यक स्थान दिया गया है। ऐसे देवालय जहां विधि पूर्वक देवार्चन होता हो ऐसी व्यवस्था सज्जनों के उद्धार के लिये रखी गयी है । किन्तु आजकल दुख की बात है कि तीर्थ और क्षेत्रों में और भी अधिक पाप होते हैं ।

सब स्थानों का पाप पुण्य स्थानों में जाकर नष्ट हो जाता है फिर पुण्य स्थानों में किया गया पाप कहां जाकर नष्ट हो सकेगा । यही क्यों जिस प्रकार तीर्थस्थान में किया हुआ पुण्य सहस्र गुणित फल देता है उसी प्रकार वहां किया हुआ पाप क्या सहस्र गुणित कुफल न देगा ? क्या ऐसे स्थनों पर किये गये पापों से उद्धार हो सकता है ? आज कल क्षेत्र और तीर्थस्थान रोजगार के धन्धे बने हुए हैं । वहां हम भेडों की तरह जाते हैं , किन्तु सुधार की ओर कोई ध्यान नहीं करता। जब ऐसी अवस्था है तो क्या हम मन्दिरों से हाथ धो बैठें ? नहीं यह सर्वथा अनुचित होगा । कृषिभूमि में चूहे बहुत होगये है, वे खेती को बहुत हानि पहुँचाते है तो क्या कृषकगण खेती करना ही छोड बैठें । माना कि बुराइयां पैदा हो गयी हैं , उनका सुधार कीजिये । इस दिव्यदेश की प्रतिष्ठा ऐसे ही उद्देश्यों से हुई है आशा है आप इसी प्रकार इस से आनन्द लेते रहेंगे। शुभम्
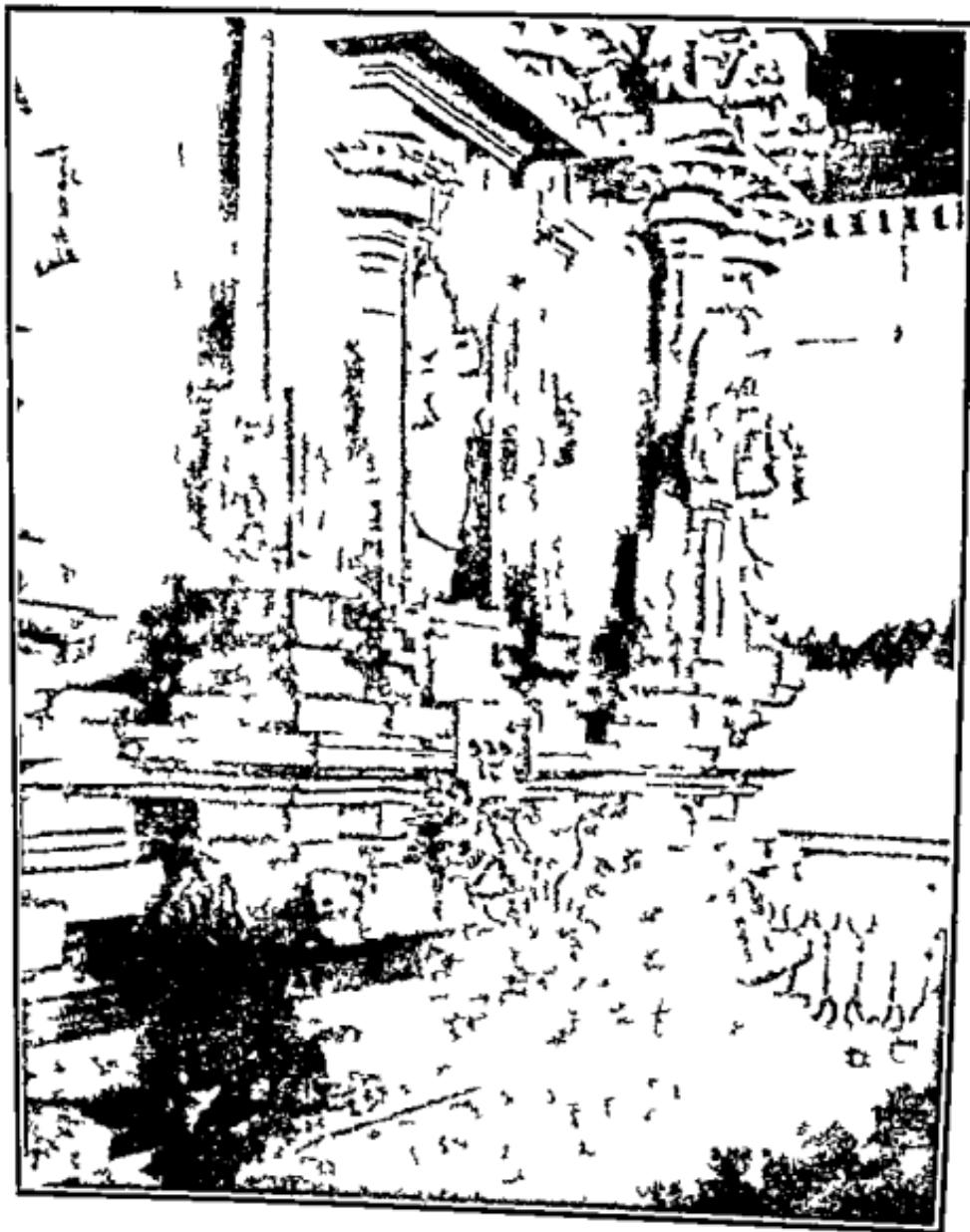
मंदिर के प्रदक्षिण का एक भाग ।

बम्बई में " दिव्य-देश "

[ले० - श्रीयुत रघुनन्दनप्रसाद शुक्ल ।]

(१)

सच्ची श्रद्धा भक्ति साधुता सहृदयता का चित्र ।
खिंच जाता जाते-जाते ही उर पर जहाँ पवित्र ॥
चित्त कर शुद्ध आत्मता-प्राप्त ।
'भोग' भाव का कर सके समाप्त ॥
बना वह दिव्य-देश का स्थान ।
प्रगट श्रीवेङ्कटेश भगवान ॥

(२)

शोध-शोध ला वेद विहित विधि के विभिन्न पाषाण ।
सुघर शिल्प-शिल्पियों से करा ' दिव्य-देश ' निर्माण ॥
रचाया मञ्जुलता का कुञ्ज ।
सर्व स्वर्गिक सुखमा का पुञ्ज ॥
क्रिया कैसी सुकृती का कार्य ।
धन्य है तुम्हें " अनन्ताचार्य " ।

(३)

कञ्चन की कल कान्त कलशियों युत कमनीय कँगूर ।
सुखमा से जिनकी प्रतिक्षण ज्यों बरस रहा था नूर ॥
खचित उनपर देवों की मूर्ति ।
भक्ति से करतीं अन्तः-पूर्ति ॥
यज्ञ का सविध प्रज्ञ-प्रारम्भ !
-देखते बनता-गरुड-स्तम्भ ॥

(४)

झांझ मृदङ्ग सङ्ग गूँजे 'गह–गह' गह गहे निशान।
भक्ति–भाव से परिप्लावित जन करते थे कल गान॥
कहीं पर होता वेदोच्चार।
भेरि घण्टा घण्टी ध्वनि द्वार॥
गगन भेदो था जय–जयकार।
भक्ति थी रही हिलोरें मार॥

(५)

तोरण–वन्दन, ध्वजा–पताका, नारिकेल के पत्र।
सजे हुए शोभा पाते थे यत्र–तत्र सर्वत्र॥
"इलक्ट्रिक–वल्व" प्रभाशाली।
प्रकट करते थे दीवाली॥
देख, वह सुखमा वह उत्साह!
निकलता मुख से सहसा 'वाह'!!

सनातन-धर्म-सभा।

श्रीमद् आचार्य-चरण की अध्यक्षता में।

(आषाढ कृष्ण १ वृहस्पति वार स्थान मारवाडी विद्यालय)

आज सन्ध्याकाल के ७ बजे श्री १००८ श्री जगद्गुरु श्रीमद् अनन्ताचार्यजी की अध्यक्षता में सनातन धर्म की एक सभा स्थानीय "मारवाडी विद्यालय" में हुई। उपस्थिति खासी थी। श्रीमद् आचार्य चरण ने अपने सुमधुर भाषण में आर्य्य संस्कृति के मूल सिद्धान्त स्वरूप इन छः तत्वों (१) समदर्शिता (२) निस्पृहता (३) अनन्यता (४) अहिंसा (५) सुहृद् भावना तथा (६) सर्व सेवकत्व भावना के विस्तृत प्रसार की उपयोगिता बतलाते हुए संसार के कोने कोने को इस निनाद से प्रतिध्वनित कर देने की आवश्यकता

बतलायी । और पूना के प्रसिद्ध पञ्चाङ्गकर्ता श्रीमान् पं. रघुनाथशास्त्री पटवर्धन (ज्योतिषरत्न) जी को ज्योतिषभूषण की पदवी से विभूषित किया । इस के अनन्तर अन्य विद्वानों के भी उपयोगी भाषण तथा प्रस्ताव आदि उपस्थित हुए । विशेष महत्व के प्रस्तावों का सारांश इस प्रकार है – (१) दिव्यदेश के आसपास से वेश्याओं के मकान तथा शराब–ताडी आदि की दुकानों को खाली करादेने के लिये म्युनिस्पैलिटी तथा पुलिसकमिश्नर से प्रार्थना करना (२) फणसवाडी का नाम बदलकर वेङ्कटेश्वरवाडी कर देने के लिये प्रार्थना करना । (३) एक संस्कृत कालिज की संस्थापना का विचार (४) प्रचारकार्य के लिये व्यवस्था करना तथा एक हिन्दी दैनिक व एक अंग्रेजी मासिक पत्र प्रकाशन के लिये लिमिटेड कम्पनी स्थापित करने की आयोजना करना । इस के बाद श्रीवेङ्कटेश भगवान की कुण्डली का फल सुनाया गया जो इसी अङ्क में अन्यत्र प्रकाशित है और सभा समाप्त हुई ।

भजन

कहाँ लग वरणों शोभा अपार ॥ टेक ॥
श्री श्री सम्प्रदाय के ऊपर किया बडा उपकार ॥
श्रीचरणों का दर्शन करि के पुलकित होवे चित्त हमार ।
दिव्यदेश की शोभा निरखत मगन भये नर नार ॥
श्री श्री दिव्यदेश के कारण सम्प्रदाय परचार ।
शङ्कितजन का भरम मिटादिया बतादिया सब सार ॥
दास पतित पर किरपाकीजो अपनी वस्तु निहार ।
वात्सल्यादि गुण समुद्र से विरजा के करदो पार ॥

दासानुदास–बद्रीप्रपन्न
कोलिया ।

" श्रीवेंकटेश भगवान् के मन्दिर की सार्वजनिक प्रियता "

जनमनरंज मंजु मधुकर सा, जीह जसोमति हरि हलधरसा ।
" रामचरित मानस "

वेङ्कटेश भगवान अनूप, मुग्ध मुम्बई भइ लखि रूप ।
कितना है अच्छा आदर्श, होता नहीं चरण स्पर्श ।
श्रीमदनन्ताचार्य महान्, भक्ति मुक्ति मग के गुण खान ।
वेङ्कटेश प्रभु जी के साथ, करी मुम्बई सकल कृतार्थ ।
दिव्यदेश की पदवी पाय, चली सकल नगरी उमड़ाय ।
बालक वृद्ध युवा नरनारि, दर्शक गण की भीड अपार ।
वेङ्कटेश की कृपा दिखाय, नामलेत निगरी बनिजाय ।
होतहि वेङ्कटेश को दास, आवे विघ्न न एकहु पास ।
रची कुमारगी दम्भ उपाय, किन्तु गये सब मुँहकी खाय ।
सुनलो जिन के है कुछ शर्म, विजयी सदा सनातन धर्म ।
नहिं इस के मुँह लगना आय, वरना भोगोगे सन्ताप ।
है ईश्वर ही जग का सार, कर नहिं सके कोई इन्कार ।
पाप शाप भव दुःख सुनाय, लेत नाम तुरतहि जरिजाय ।
करता विनय दोऊ कर जोरि, सभी बात सुनो तुम मोरि ।
भक्ति मुक्ति अरु सच्चा ज्ञान, सुखमय जीवन नैतिक शान ।
जो तुम चाहो पदनिरवान, दया धर्म सब जग कल्यान ।
दूध पूत इच्छित फल भाय, है इन सब का एक उपाय ।
एक बात अरु एकी भाव, वेङ्कटेश की शरणहिं जाव ।
देखेंगे तुम को खुशहाल, गरजेंगे तब चन्दरभाल ।

" अवस्थी "

सम्पादकीय विचार

बधाई — मुम्बई का दिव्यदेश मन्दिर सचमुच मुम्बई के योग्य ही दिव्यदेश है। जिस की लालसा आज अनेक वर्षों से होरही थी; जिस की आवश्यकता न केवल मुम्बई निवासी श्रीवैष्णवों को ही प्रत्युत समस्त देश के श्रीवैष्णवसमाज को प्रतीत हो रही थी और जिस के बनजाने से आज यह मोहमयी–बम्बई हिन्दूमात्र का विशेषकर श्रीवैष्णव बन्धुओं का पवित्र तीर्थस्थान बनगया है उसके लिये हम भारत के समस्त श्रीवैष्णवबन्धुओं का विशेष कर मुम्बई के परमोत्साही उदार श्रीवैष्णव महानुभावों को बधाई देना अनुचित न होगा किन्तु सच पूछिये तो बधाई के सब से अधिक पात्र वे वैकुण्ठवासी आत्मायें है जिन्हों ने मुम्बई में दिव्यदेश स्थापन की लालसा सब से पहले प्रकट की थी और जीवन के अन्त तक जिनके हृदय में लालसा बनी रही। अवश्य ही हमें आज यह सौभाग्य प्राप्त नहीं कि हम उनको बधाई दें किन्तु उनकी वैकुण्ठवासी आत्मा जो अपनी इच्छापूर्ति से अवश्य ही प्रसन्न हो रही होंगी उनको बधाई दिये विना हम से रहा नहीं जाता। हम उन समस्त मुम्बई निवासी धर्मप्रेमियों को भी और उनके सहचरों को बधाई देते हैं जिनकी सहायता, जिन के सहयोग और जिनके सहृदयता से आज इस दिव्यदेश की रचना होकर प्रतिष्ठा महोत्सव भी सकुशल और सफलता के साथ हो गया है।

धन्यवाद—दिव्यदेश की रचना में, उस की प्रतिष्ठा के महोत्सव में और उस के सुचारु रूपेण अर्चा पूजा आदि कार्यों में जिन धनी मानी दानवीर दानियों ने अपने धन का दान देकर उसका सब से सुन्दर और सब से बड़ा सदुपयोग किया है और कर रहे है, जिन महानुभावों के परिश्रम और प्रयत्न से दिव्यदेश के लिये धन एकत्र कियागया है और हो रहा है यद्यपि उन की धर्मप्रियता धन्यवाद की भूखी नहीं तथापि हम आज उनको देश के हिन्दूमात्र विशेष कर श्रीवैष्णव बन्धु-

ओं की ओर से हृदय से धन्यवाद दिये विना नहीं रह सकते। जिस प्रकार उन्हों ने अपना कर्तव्य समझ कर यह सब कुछ किया है और कर रहे हैं उसी प्रकार हम भी अपना कर्तव्य समझते हैं कि उनको धन्यवाद दें। आशा है कि वे दानवीर न्याय की दृष्टि से इस पवित्र सात्विक धन्यवाद रूपी दान के लेने से इन्कार न करेंगे जब कि उन्हों ने नहीं मालूम कितनों को अपने दानों से प्रतिग्राही बना रखा है। हम उन महानुभावों को भी हृदय से धन्यवाद देते हैं जिन्हों ने अपनी अवधानता से, अपने विचारों से और अपने परिश्रम से दिव्यदेश निर्माण और उस के प्रतिष्ठा महोत्सव में सहायता दी है। अन्त में हम उन समस्त महानुभावों को विशेष कर अनाथालय के सञ्चालकों और स्वयं सेवकों को तथा अधिकारियों को भी धन्यवाद देना कर्तव्य समझते है जिन्हों ने प्रतिष्ठा महोत्सव के समय, जुलूसों के निकालने में तथा अन्य अवसरों पर पानी बरसते में भी रात और दिन के विना विचार के कठिन परिश्रम से सहायता दी है।

कृतज्ञता—"कृतघ्ने नास्तिनिष्कृतिः" अर्थात्- संसार में सब का उद्धार हो सकता है, सब पापों का तो प्रायश्चित्त बताया गया है किन्तु "कृतघ्न प्राणी का उद्धार नहीं होता" इसी भय से हम भयभीत हैं और यद्यपि हम को आज ढूंढने पर भी संसार में किसी भाषा में वे शब्द उपयुक्तरूप से नहीं मिलते जिन शब्दों में हम अपने मुख से हृदयगत कृतज्ञता को प्रकटकरें तथापि अपने उद्धार के लिये अपने उद्धारकर्ता और सचमुच उद्धारकर्ता के प्रति अपने टूटे फूटे शब्दों में ही सही किन्तु कृतज्ञता प्रकटकरना हम कर्तव्य समझते हैं। "आचार्यरूपैरवतीर्य लोके मुहुर्मुहुर्योवति वेदधर्मान्" अर्थात्- जो भगवान् लक्ष्मीनारायण संसार में बारम्बार आचार्य रूप से अवतीर्ण हो कर- आचार्यावतार रूप से सदा वैदिकधर्म की रक्षा करते है उन के प्रति भी यदि हम कृतज्ञता प्रकट न करें तो हम कृतघ्नता के महापाप से बच नहीं सकते। अब

से मुम्बई में दिव्यदेश रचना का सूत्रपात हुआ तव से आज तक जितनी चिन्ता मुम्बई निवासियों ने की उस से कहीं अधिक कृपा और भक्तवत्सलता भगवान् श्रीवेङ्कटेश जी ने अपने आचार्यावतार रूप से दिखाया है। जिस समय से मन्दिर के लिये भूमि खरीदी गयी है उस समय से आजतक इस पवित्र कार्य में श्रीआचार्यचरण को कितना श्रम उठाना पड़ा है, लोगों ने अपने विचारों में कैसे कैसे परिवर्तन किये हैं और बीचबीच में कैसी कैसी परिस्थितियां उपस्थित हुई हैं उन का उल्लेख न करना ही अधिक अच्छा है किन्तु फिर भी भगवान भक्तवत्सल हैं वे हमारे दुर्गुणों का स्मरथ नहीं रखते प्रत्युत उन को मिटाने की ही कृपा करते हैं और हमारे कल्याण का मार्ग दिखाते हैं उसी प्रकार आचार्य रूपी भगवान ने श्रीकाञ्ची प्रतिवादि भयङ्कर मठाधीश्वर जगद्गुरु श्री१००८ श्री स्वामी अनन्ताचार्यजी महाराज ने हमारे सव दुर्गुणों को भुलाकर निर्हेतुक कृपा से ही हमारे उद्धार के लिये इस मोहमयी नगरी का जिसे आज भारत की सर्वश्रेष्ट नगरी के नाम से हम पुकारते हैं जो आज पाश्चात्य और भारत ही नहीं विदेश और भारत के सङ्घर्ष का स्थान है जहां तीर्थयात्री प्रतिदिन केवल इस लिये आते थे कि दक्षिण तीर्थयात्रा के पश्चात् श्रीकृष्ण की प्यासी समुद्रमग्नद्वारकापुरी के जाने के मार्ग में यह नगरी बीच में आजाती है और इधर उधर अजायबघर और उसी प्रकार अपने उत्तर भारत की दृष्टि में अनेक अजायबी चीजें और स्थान देखकर चले जाते थे। आज अपने श्रम और अविच्छिन्न श्रम से पवित्र तीर्थस्थान सुन्दर दिव्यदेश एवं भगवान श्रीवेङ्कटेशजी का विश्रामस्थान बना दिया है आज इस नगरी के निवासी ही नहीं सहस्रों की सङ्ख्या में भारत के भिन्नभिन्न प्रान्त निवासी तीर्थयात्री दिव्यदेश मन्दिर में आते और भगवान श्रीवेङ्कटेश के दर्शन करते, तीर्थ और प्रसाद लेकर कृतार्थ होते हैं। इस लिये हम समस्त भारतवासी हिन्दू विशेष कर श्रीवैष्णव समुदाय, श्रीआचार्य चरणों के प्रति यदि

कृतज्ञता नहीं प्रकट करें तो इस से बढ के कृतघ्नता क्या हो सकती है। अतः हम कृतज्ञता प्रकट करते हैं और प्रार्थना करते हैं कि—

" अपराध सहस्र भाजन पतितं भीमभवार्णवोदरे ।
अगतिं शरणागत हरे कृपया केवलमात्मसात्कुरु ॥ "

अर्थात्—मैं हजारों अपराधों का घर हूं—मैं ने नहीं मालूम कितने अपराध किये हैं, दिव्यदेश की रचना और प्रतिष्ठा के सम्बन्ध में भी मुझसे वारम्बार और अनेक प्रकार की त्रुटियां हुई है और भयङ्कर भवसागर के उदर में पडा— डूबरहा हूं मुझे कोई गति नहीं दिखायी देती—रात दिन अपने सांसारिक काम के मिथ्याजाल में पडा रहता हूं उस से समय बचा कर भगवान के दर्शनों और उत्सवों में आसकता हूं किन्तु जानेवाली बुद्धि नहीं होती अतएव हे दीनबन्धो ! हे हरि स्वरूप अचार्यचरण मुझ में कुछ भी गुण नहीं किन्तु अपनी अहेतुक कृपा से मुझे अपनाइये ।

उलहना— मुम्बई दिव्यदेश प्रतिष्ठा महोत्सव के अवसर पर इस के प्रबन्ध करने वाली सभा ने, स्वागतकारिणी सभा ने देश के समस्त, श्रीवैष्णवों को सामान्य रूप से और विशेष रूप से श्रीआचार्य चरणों को, मठाधीशों और महन्तों को, विद्वानों और धनवानों को ही नहीं देश के अभिमान हिन्दुस्थान के श्रीवैष्णव हिन्दू नरेशों को भी आमन्त्रित किया था और आग्रहपूर्वक आमन्त्रित किया था किन्तु दु.ख की बात है और भविष्य में भारत के धार्मिक संसार के विचारने योग्य बात है कि न तो हमारे कोई गद्दीधर आचार्यचरण पधारे और न कोई हिन्दू नरेश ! आचार्यचरणों के सम्बन्ध में हम सन्तोष कर सकते हैं कि इस दिव्यदेश महोत्सव को देखने की अभिलाषा रखते हुए भी वे अपने कर्तव्य—इसी प्रकार के जन साधारण के उद्धार करने वाले कर्तव्य में लगे रहने के कारण अथवा अभाग्यवश गद्दीधरों के एकत्र होने में जो अड़चनें पैदा होती है उनके कारण नहीं पधारे
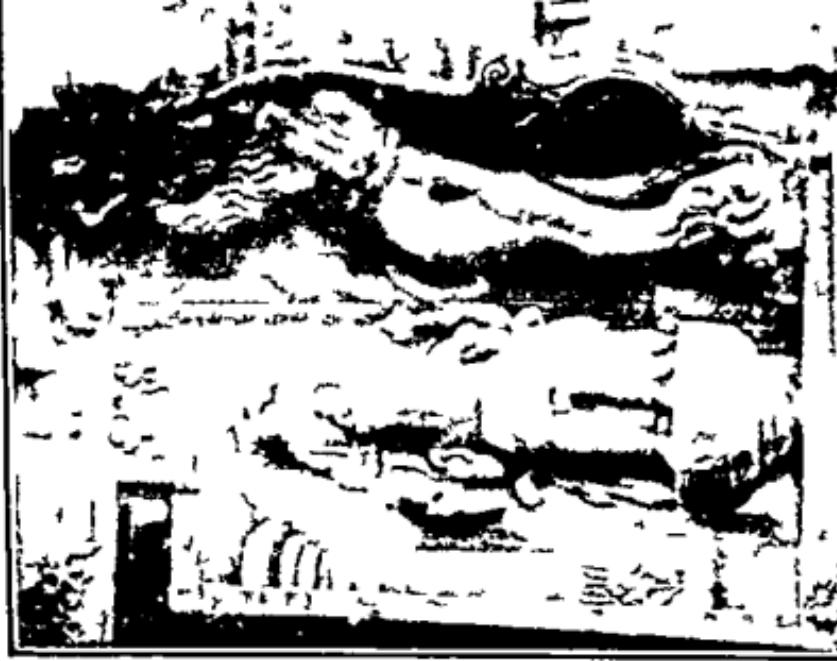
मुखद्वार में श्री सुदर्शन भगवान।

एक दृश्य भाग।
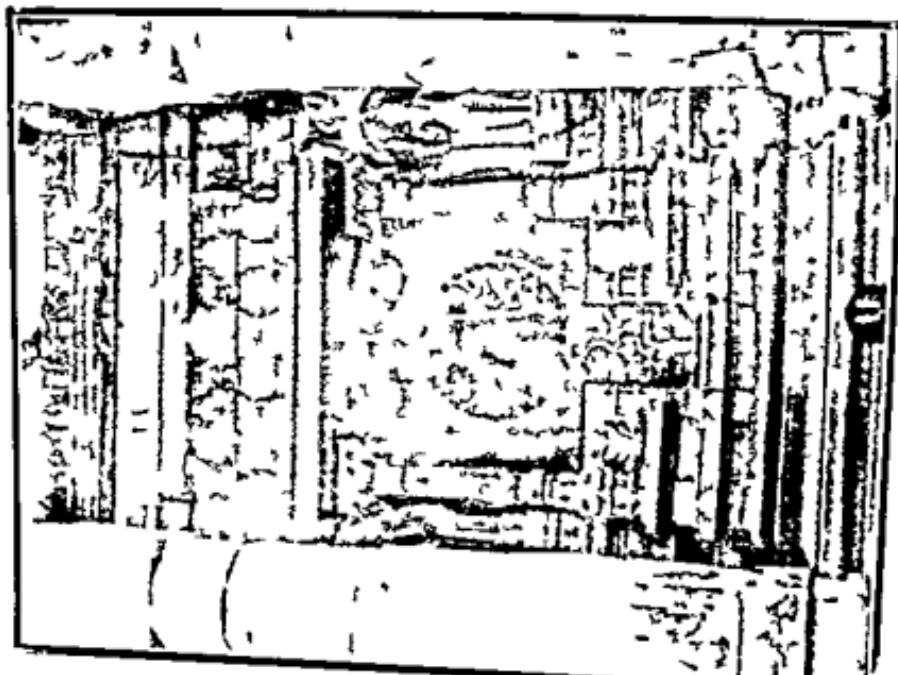
होंगे किन्तु देशी हिन्दू नरेशों विशेषकर श्रीवैष्णव नरेशों के न आने का कोई कारण दिखाई नहीं देता । जो नरेश अपने देश में नौकरी करने के लिये आनेवाले गोरे अधिकारियों के स्वागत के लिये सहस्रों रुपये व्ययकरके पहले ही से आकर समय से पूर्व ही समुद्रतट पर जहाज के दर्शनों की बाट जोहने के लिये प्राय आया करते है और देश के धन से पेटपालकर और हमारे लिये पराधीनता की श्रङ्खला को अधिक मजबूतकर के जब वे विलायत वापसजाने लगते है तब भी आप उनको विदाकरने के लिये आते और झूठे ही सही किन्तु वियोग के लिये चार आँसू बहाते है आज उन्ही नरेशों का इस प्रतिष्ठा महोत्सव के समय यहा न आना, परब्रह्म परमात्मा के आगमन के समय– किसी देशविशेष के नहीं अखिल ब्रह्माण्ड के अधीश्वर के आगमन में अपने सम्प्रदाय के सर्वस्व भगवान् श्रीवेङ्कटेशजी के स्वागत में सम्मिलित न होना साधारण भुलादेने की बात नहीं है । यह दशा धार्मिक ससार के लिये बडी ही शोचनीय है और इस लिये हम अपने देशी नरेशों को विशेषकर श्रीवैश्णव नरेशों को इस अवसर पर, इस प्रतिष्ठामहोत्सव में भाग न लेने पर उलहना दिये विना नहीं रह सकते । हम इस बात की चिन्ता नहीं करते कि इस दिव्यदेश मन्दिर की सहायता में किसी हिन्दू नरेश ने एक पैसा की आर्थिक सहायता नहीं दी, माँगा ही नहीं गया था । यद्यपि यह बात भी खटकने की है कि जो नरेश–जो स्वतन्त्र नरेश गोरों के स्मारक में, उनकी मूर्तियों को स्थापन करके भारत की भूमि पर सदा के लिये यह दिखलाने को कि हम अपने ऊपर जबरन शासनकरने वाले ईशाई अधिकारियों की मूर्ति की पूजाकरना भी बुरा नहीं मानते और हम कितने गिरे हुए पतितराजभक्त नहीं शासक या नौकर शाही भक्त हैं, सहस्रों रुपये के चन्दे दिया करते है वेही अपने इष्टदेव की अर्चामूर्ति–अर्चावतार के स्थापन में दिव्यदेश मन्दिर के निर्माण में एक पैसा भी दान न दें यह साधारण में भुलादेने की बात नहीं किन्तु इसे हम इस लिये भूलजाते है कि इस से स्वार्थ– सम्प्रदाय का स्वार्थ प्रकट होता है किन्तु यह बात तो भुलाई नहीं जासकती कि वे ऐसे समय में आर्वेतक नहीं ओर इस बात

से संसार के सामने न डरें कि जो आज असहयोग को सब से अधिक बुरा मानते हैं वे ही नरेश अपने धर्मसे अपने धार्मिकस्थान और उत्सव से नहीं नहीं श्रीवैष्णव समाज से आज असहयोग करते हैं यह आश्चर्य की बात है। अस्तु जो हुआ सो हुआ। हम उलहना देकर ही सन्तुष्ट नहीं है हम अपने देश के भूषण हिन्दू नरेशों विशेषकर श्रीवैष्णव नरेशों से सानुरोध प्रार्थना करते हैं कि हे धर्मप्राण महापुरषों के वशावावतस ! तुम लोगों के पूर्वपुरुषों ने कितने तीर्थस्थानों की रक्षा की, कितने मन्दिर बनवाये कितने मन्दिरों और तीर्थों में जागीरें लगायीं और अपने सम्प्रदाय और धर्म के कार्यों में कितने दान दिये यह तुम से छिपा हुआ नहीं, है फिर भी तुमने इस अवसर पर गलती की है। जो की सो की, अब भविष्य में अपनी जाति अपने पद और धर्म का गौरव भुलाना नहीं, अपने धर्म प्राण हिन्दू जाति के लिये तुमही अभिमानस्थल हो, आज भारत की हिन्दू जाति तुम्हारे ही ऊपर अभिमान करती है; तुम उस के अभिमान के रक्षक बनो और अपनी जातीयता के जीवन रूप धर्म कार्य में सदा अग्रसर होकर अपने पूर्वपुरुषों के गौरव को बढावो; ईश्वर आप का सदा सहायक होगा।

सांप्रदायिकता का अर्थ।

आज कल अधपढे लेखक देशभक्ति की भावुकता में आकर प्राय साम्प्रदायिकता की निन्दा और आलोचना किया करते है। वे यह नहीं जानते कि सम्प्रदाय क्या है और साम्प्रदायिकता क्या है। उन्हों ने साम्प्रदायिकता का अर्थ भेदभावपूर्ण सङ्कीर्णता समझ रखा है और इसी कारण वे सदैव साम्प्रदायिकता को मिटाने की चेष्टा करते है। यदि उनके अर्थ के साथ उनका मूल साम्प्रदायिक शब्द प्रयुक्त किया जाय तो हम कोई आपत्ति नहीं क्योंकि एक एक शब्द के अनेक अर्थ है और होते जाते है किन्तु अर्थ साथ में न रहता है और न उनका अर्थ यथार्थ किसी कोश से सिद्ध होता है अत एव साम्प्रदायिकता के पवित्र भाव को न जानने वाले अधपढे लेखकों के आक्षेपों का खण्डन करना प्रत्येक साम्प्रदायिक व्यक्ति का कर्तव्य है। सम्प्रदाय शब्द आजकल योगरूढ शब्द है जो शैव, शाक्त, स्मार्त, वैष्णव श्रीवैष्णव आदि धार्मिक सम्प्रदायों का बोधक है और इन्हीं धार्मिक

संप्रदायों के भाव को साम्प्रदायिकता कहते है। जिस प्रकार जातीयता राष्ट्रीयता आदि उसके उपासकों के लिये गौरवपूर्ण भाव और महत्त्व के शब्द माने जाते हैं उसी प्रकार न केवल क्षणभङ्गुर शारीरिक सांसारिक सुखों के साधन प्रत्युत आत्मा के कल्याण पथ का प्रदर्शक शब्द सम्प्रदाय है और उसके ही भाव को धार्मिक जन सब से अधिक महत्त्वपूर्ण साम्प्रदायिकता को मानते हैं। अधपढे लेखक इन शब्दार्थों को न जानकर कहीं उत्तरादी और दक्षिणादी श्रीवैष्णवों में भेदभाव का मिथ्या स्वप्न देख कर साम्प्रदायिकता शब्द की निन्दा करते है। यह बडी बेजा बात है किसी भी धर्म के भाव को दूषितकरनेवाला कार्य जितना बुरा है उतनाही यह अधपढों का साम्प्रदायिकता का अर्थ प्रयोग बुरा है। कोई भी देश और जाति का हितैषी मनुष्य जितना बुरा आपसमें भेदभाव और सङ्कीर्णता को समझता है उस से कहीं अधिक बुरा सम्प्रदायावलम्बी, साम्प्रदायिकता के उपासक और साम्प्रदायिकता पर ही संसार का अस्तित्व माननेवाले श्रीवैष्णव समझते है। श्रीवैष्णव सम्प्रदाय से भी कोई धर्म या समाज अधिक उदार संसार में है यह बात हम मान नहीं सकते। इस सम्प्रदाय के इतिहास इस सम्प्रदाय के आचार्यों के जीवन चरित्र पढिये और फिर विचारिये कि सचमुच संसार में इस से बढ के और उदार महत्व का कोई सम्प्रदाय है या नहीं। रही आज कल देश में आपस के कलह की बात; इस विषय में तो हम यही कहेंगे कि जिस प्रकार उत्पातकरने वाले मुसलमान आज गला फाड फाडकर कहते है और उनके अधभक्त राष्ट्रीयता को बदनाम करनेवाले काङ्ग्रेसमैन उनकी बातों का समर्थन करते है कि सचमुच देश में हिन्दू मुसलमानों का झगडा हिन्दूमहासभा ने अछूतोद्धार, शुद्धि और सङ्गठन के द्वारा पैदा किया है' जिस प्रकार मुसलमानों और उनके भक्तों के कथन में नाम मात्र की सत्यता नहीं है उसी प्रकार श्रीवैष्णव संसार में साधारणियों के विद्वेष के कारण सम्प्रदाय के नियम सम्प्रदाय के आचार्य या साम्प्रदायिकता नहीं, वे ही स्वयं कारण हैं इसमें कोई सन्देह नहीं। श्रीसम्प्रदायावलम्बियों ने साधारणियों के लिये कोई नया नियम नहीं बनाया, उनकी अवहेलना वे न कभी करते है न करना अपना धर्म समझते है और साधारण वैष्णवसमुदाय इस बात का अनुभवकरता है किन्तु आज कलह का

युग है चारों ओर शकुनी, शल्य और माहिल के अवतार दिखाई दे रहे हैं, उनका काम ही दो समुदायों में लडादेना, एक को दूसरे के विरुद्ध उभाडना है। देखो न आज तक कब अछूतों को अन्य उच्चजाति के हिन्दुओं से कोई शिकायत थी; कब वे कहते थे कि हमारा छुआ तुम पानी पियो, हमें अपने उन मन्दिरों में भी जाने दो जो न हमारे बनाये हैं और न शास्त्रानुसार वहां हमें जाना चाहिये। फिर भी लडानेवालों ने अछूतों को कैसा उभाडा और उसका परिणाम स्वरूप आज आपस में कैसा कलह काण्ड हो रहा है। इसी लिये हम अपने अधपढे लेखकों के, साम्प्रदायिकता शब्द के अनर्थकारी मनमाने अनर्थ का खण्डन करते हैं और आशाकरते हैं कि वे अपनी गलती को मानकर भविष्य में ऐसे भ्रमोत्पादक अनर्थकारी अर्थ में साम्प्रदायिकता शब्द का प्रयोग न करेंगे।

स्वागत सत्कार।

प्रतिष्ठा समारोह के समय निमन्त्रित और अनिमन्त्रित श्रीवैष्णव समुदाय बडे समारोह के साथ एकत्र था। प्रायः सभी प्रान्तों के श्रीवैष्णव इस अवसर पर पधारे थे। अभ्यागत अतिथियों के स्वागतका बहुत ही सुन्दर प्रबन्ध था। ठहरने के लिये अनेक धर्मशालाओं और अन्य स्थानों में उत्तम प्रबन्ध किया गया था। भोजनादि का इतना अच्छाप्रबन्ध था कि किसी को कोई शिकायत करने का अवसर नहीं मिला। निमन्त्रण में आये हुए विद्वानों और अन्य सभी श्रीवैष्णव महानुभावों की विदाई आदि में भी बडी उदारता के साथ कार्य हुए। यहाँ तक कि जो लोग अनिमन्त्रित अभ्यागत थे उनको भी सन्तुष्ट किया गया और, यज्ञ तथा प्रतिष्ठा महोत्सव का कार्य अन्त तक आनन्दपूर्वक सम्पूर्ण हुआ इसलिये हम उन सभी कार्यसञ्चालकों को जिन के अनवरतश्रम से सब कार्य सम्पन्न हुए हैं बधाई देते हैं और श्रीचरणों की इस अलौकिक प्रबन्धशक्ति की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा किये बिना हम नहीं रहसकते कि स्वागत का बडा से बडा और छोटा से छोटा प्रबन्ध, किस प्रकार होना चाहिये इस की देखरेख श्रीचरणों के अधीनही थी। रातदिन प्रतिष्ठा यज्ञ सम्बन्धी शास्त्रीय विधियों में लगे हुए भी सारे प्रबन्ध की देखभालकरना महापुरुषों की शक्ति का ही काम है।

मंदिर के बनावट का एक नमूना ।

श्रीः ।

वैदिकसर्वस्व के विशेषांक का अनुबन्ध.

प्रतिष्ठामहोत्सव में उपस्थित महानुभावों की नामावली.

वेदपाठी ॥

कृष्णयजुर्वेदी- (क)

१. क. सदाशिव घनपाठी,	धर्मपुरी.
२. राजन्न घनपाठी,	"
३. ताङ्गरि. सीतारामय्य, घनपाठी,	"
४. क. महादेव घनपाठी,	"
५. भास्कर भट गोखले,	बम्बई.
६. मा. नरसिंहाचारी,	काञ्ची.
७. वि. शिङ्गराचारी,	"
८. वाध्यार, घनपाठी वेङ्कटाचारी.	श्रीरङ्गम्.
९. कुण्डलम्. रङ्गसामि अय्यङ्गार,	"
१०. ति. त. रङ्गाचारी,	काञ्ची.
११. ति. वि. सुदर्शनाचारी, उपाध्याय.	"
१२. ति. अ. दोड्डयाचारी,	"
१३. मुड्डुम्बि. अनन्ताचारी,	मेलकोट.
१४. अम्माल्. तिरुवेङ्कटाचारी,	तिरुवेल्लरै.

२२. विश्वम्भर.			ब्रह्मपुराण.
२३. जुहारमल खाद्व,			ब्रह्माण्डपुराण.
२४. नेतराममिश्र,			वामनपुराण.
२५. भूदेवशर्मा,			गरुडपुराण.
२६. दीनानाथशर्मा,			वराहपुराण.
२७ हरिहरशर्मा,			पद्मपुराण.
२८. अनन्ताचार्य,	सतारा.		भविष्यपुराण.
२९. वृजलाल शर्मा,	वृन्दावन.		ब्रह्मवैवर्तपुराण
३०. रामकृष्ण रामानुजदास,	"		"
३१. वलभद्रदास,	गोवर्धन.		बृहन्नारदीयपुराण
३२ सीतारामशर्मा,			मार्कण्डेयपुराण
३३ गोविन्दरामजी,			स्कन्दपुराण.
३४ उमाकान्त झा,			"
३५ रामकृष्णशर्मा,			लिङ्गपुराण.
३६ जयनारायणशर्मा,			शिवपुराण.

अन्यान्यम-थपाठी ।

१ श्रीभाष्य—	श्रीमान् एम्बार कृष्णाचार्यस्वामी.
"	म. देवशिखामणि रामानुजाचार्यस्वामी.
२ भगवद्विषय—	षष्ठि. तिरुवेङ्कटाचार्यजी.
"	तिरुकण्णपुरम्. श्रीनिवासाचार्यजी.
३ गीताभाष्य—	विञ्जिमूर कृष्णाचार्यजी.
"	गोविन्दाचार्यजी, वृन्दावन.
४ वेदार्थसंग्रह—	पं. विष्वक्सेनजी.
"	प. मधुसूदनप्रपन्न, चित्रकूट.
५ उपनिषद्भाष्य—	प. रघुवराचार्यजी, प्रयाग.
"	प. रामकुमारशास्त्री, कानपुर.

—०—

ीमान. राजगुरु श्री बदरीप्रपन्नाचार्य शास्त्री,

... गदाधरा चार्यजी
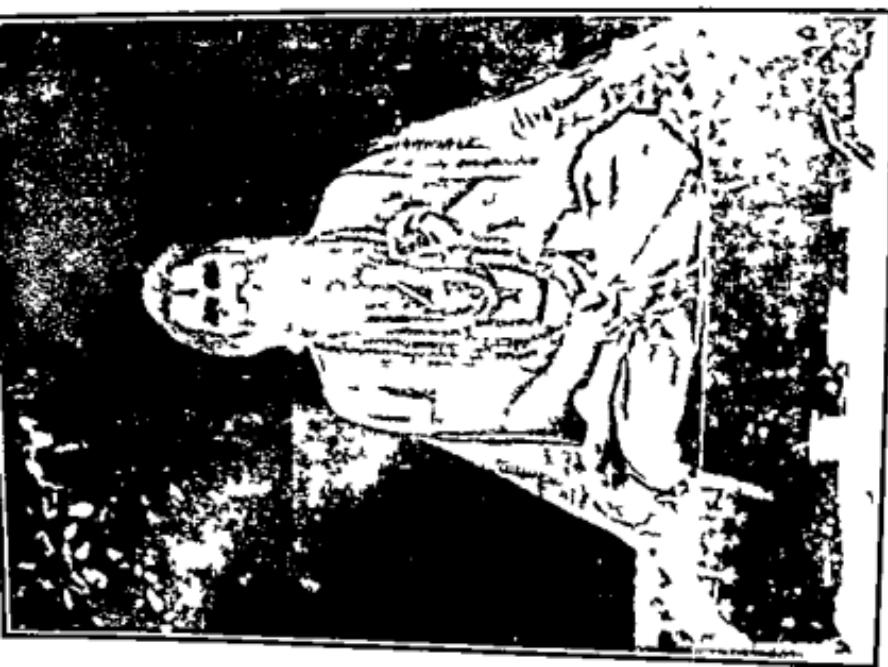
दिव्यप्रबन्ध पाठक।

१.	श्रीमान्	श्रीनिवासवरदाचारीजी	काञ्ची.
२.	,,	देशूर रङ्गस्वामि अय्यङ्गार	,,
३.	,,	,, गोपालस्वामि अय्यङ्गार	,,
४.	,,	तिरुवेङ्कटाचार्यजी	,,
५.	,,	मा. ओ. भाष्यकाराचारीजी	,,
६.	,,	का. ति. त. कृष्णाचारीजी	,,
७.	,,	का. ति. त. तिरुमलाचारीजी	,,
८.	,,	उ. राघवाचारीजी	,,
९.	,,	अय्यावय्यङ्गार	श्रीरङ्गम्.
१०.	,,	पि. शठकोपाचारीजी	,,
११.	,,	किडाबि. शठकोपाचारीजी	,,
१२.	,,	नरसिंहय्यङ्गार	,,
१३.	,,	प्र. भाष्यकाराचारीजी	भूतपुरी
१४.	,,	ति. वि. कृष्णमाचारीजी	,,
१५.	,,	प्र. भ. श्रीनिवासाचारीजी	नागूर
१६.	,,	प्र. श्रीरङ्गाचारीजी	तिरुविन्दलूर
१७.	,,	प्र. शठकोपाचारीजी	,,
१८.	,,	तिरुमलाचारीजी	तिरुमलिशै
१९.	,,	दुरैस्वामि अय्यङ्गार	,,
२०.	,,	ए. वरदाचारीजी	तिरुनगरी
२१.	,,	कृष्णमाचारीजी	,,
२२.	,,	कृष्णस्वामि अय्यङ्गार	तिरुवहीन्द्रपुरम्
२३.	,,	पष्टि. नरसिंहाचार्यजी	काञ्ची
२४.	,,	नरसिंह अय्यङ्गार	तिरुवालि
२५.	,,	वि. श्रीनिवासाचारीजी	श्रीविल्लिपुत्तूर

१८. श्रीमान् महन्त	राममपन्नजी	कुरुक्षेत्र
१९. ,, ,,	दीनबन्धुशर्मा	नारायणसरोवर
२०. ,, ,,	कृष्णाचार्यजी	डभोई
२१. ,, ,,	रामप्रपन्नाचार्यजी	वडोदा
२२. ,, ,,	रामलखनदास जी चौरोत के प्रतिनिधि रामनन्दनदासजी, और नारायणदासजी	चौरोत
२३. ,, ,,	रामनारायणजी	श्रीवेङ्कटाचल
२४. ,, ,,	गोविन्दाचार्यजी	चांदोद
२५. ,, ,,	श्रीनिवासदासजी	लहोर
२६. ,, ,,	दामोदरदासजी	अहमदाबाद
२७. ,, ,,	श्रीमन्नारायणजी	चोरवाड
२८. ,, ,,	सुदर्शनदासजी	पुष्कर
२९. ,, ,,	गजेन्द्राचार्यजी	ब्यावर
३०. ,, ,,	नरसिंहदासजी	कोलिया
३१. ,, ,,	लक्ष्मीप्रपन्नाचार्यजी	घरवासडी

नामावली पण्डितों की जो प्रतिष्ठा में सम्मिलित हुए थे।

१. श्रीमान्	महामहोपाध्याय लक्ष्मीपुरं श्रीनिवासाचार्यजी	मैसूर
२. ,,	पण्डितरल. ति. अ. गोविन्दप्पङ्गारस्वामी	मेलकोट
३. ,,	पण्डित तिरुमलाचार्यजी	,,
४. ,,	कन्दाडे. रामानुजाचार्यजी	मन्दसा
५. ,,	बहुकुटुम्बि. वरदाचार्यजी	शेरंगुलम्
६. ,,	विद्वान् वेङ्कटाचार्यजी	कापिङ्गाड्ड
७. ,,	म. म. कृष्णमाचार्यजी	तिरुनांगूर
८. ,,	मलैप्पोत्ति अय्यङ्गार	आल्वारतिरुनगरि
९. ,,	प्रोफेसर. यम्. टि. नरसिंहय्यङ्गार	बेङ्गलूर
१०. ,,	देवशिखामणि रामानुजाचार्यजी	मेलकोट

एक गोष्ठी का दृश्य ।

११. श्रीमान् एम्आर. कृष्णमाचार्यजी		श्रीरङ्गम्
१२. ,,	प्र. भ. अण्णङ्गराचार्यजी	काञ्ची
१३. ,,	बुलुसु. अप्पन्नशास्त्री	भटणविल्ली–पूर्वगोदावरी
१४. ,,	वङ्कम्. विश्वनाथशास्त्री	तोंडवरम्–गोदावरी
१५. ,,	जोगेश्वरशास्त्री	भटणविल्ली–पूर्वगोदावरी
१६. ,,	पण्डित पूर्णचन्द्राचार्य	काशी
१७. ,,	प. रामकुमारशास्त्री	कानपुर
१८. ,,	प. चुन्नीलालशास्त्री	नसीराबाद
१९. ,,	प. गोविन्दाचार्यजी	बृन्दावन
२०. ,,	प. रामगोपालशर्मा	,
२१. ,,	प. सालिग्रामाचार्यजी	काशी
२२. ,,	प. रघुवराचार्यजी	प्रयाग
२३. ,,	प. नृसिंहदत्तजी उपाध्याय	बिसौली
२४. ,,	प. इन्द्रनारायणजी द्विवेदी	बुद्धिपुरी
२५. ,,	ब्रह्माण्डम्. कृष्णाचार्यजी	मैसूर
२६. ,,	प. लक्ष्मीनारायणजी पौराणिक	प्रयाग
२७. ,,	पं. कमलनयनशास्त्री	काशी
२८. ,,	प. चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्मा	प्रयाग
२९. ,,	प. जगन्नाथप्रसादजी शुक्ल	प्रयाग
३०. ,,	प. घासीरामजी तिवारी	रोल
३१ ,,	प. केशवदत्तजी	अर्जुनसुडा
३२. ,,	प. नारायणदासजी	मदनूर

—०*०—

॥ सेठ साहूकार लोग ॥

१.	श्रीमान् सेठ रामलाल मुरलीधरजी	लक्ष्मणगढ
२.	,, ,, रामलाल लक्ष्मीनिवासजी	,,
३.	,, ,, गणेशराम मुरलीधरजी	शोलापुर
४.	,, ,, वेङ्कटलालजी	मण्डसोर
५.	,, ,, विश्वेश्वरलालजी छावछरिया	,,
६	,, ,, भोमराज सोमाणी	,,
७	,, ,, मोतीलालजी	,,
८.	,, ,, रामनारायणजी मलका	इन्दोर
९.	,, ,, सूरतरामजी	सतारा
१०.	,, ,, बदरीनारायणजी अग्रवाला	काशी
११.	, ,, कुँवर मॉगीलालजी	हैदराबाद
१२	,, ,, ,, वासुदेवजी गनेडीवाला	,,
१३.	,, ,, अखयराम रामप्रतापजी लोया	,,
१४.	,, ,, कालूराम गोविन्दरामजी	जावरा
१५	,, ,, तुलसीरामजी की नहू	रोल
१६	श्रीमती चुन्नीबाई	मूँडवा

नोट —ऊपर दिये हुए सज्जनो के सिवाय और भी कितने ही सेठ साहूकार, सन्त महन्त, दक्षिणार्धि उत्तरार्धि श्रीवैष्णव लोग, अनेक ग्रामों से आकर उत्सव में सम्मिलित थे किन्तु सब की नामावळी नहीं दी जा सकी। आशा है कि वे लोग हमें इस के लिये क्षमा करेंगे। इति।

॥ प्रतिष्ठा महोत्सव में सहायता देनेवाले सज्जनों की नामावली ॥

१. श्रीमान् सेठ खेमराज श्रीकृष्णदासजी बम्बई
२. ,, ,, रामदयाळजी सोमाणी ,,
३. ,, ,, लछीरामजी चूडीवाला ,,
४. ,, ,, माँगीलालजी झालाणी ,,
५. ,, ,, आनन्दीलाल हेमराज ,,
६. ,, ,, मुरारजी रामदास ,,
७. ,, ,, शिवनारायणजी धूडमलजी बजाज ,,
८. ,, ,, बसीदास लावोठी ,,
९. ,, ,, बदरीनारायणजी सीताराम ,,
१०. ,, ,, शिवनारायणजी केडिया ,,
११. ,, ,, मूँगालालजी गोइनका ,,
१२. ,, ,, भगवानदास हीरालाल गाँधी ,,
१३. ,, ,, मूलजीहरीदास ,,
१४. ,, ,, हरीबक्सजी महादेव कलकत्तावाला ,,
१५. ,, ,, मुरारजी रामनारायणदास ,,
१६. ,, ,, विठ्ठलदास ठाकुरदास ,,
१७. ,, ,, शिवनारायण बलदेवदास ,,
१८. ,, ,, लालचन्द घनश्यामदास ,,
१९. ,, ,, खुशालचन्द गोपालदास ,,
२०. ,, ,, रामदास खेमजी ,,
२१. ,, ,, गणेशीराम मुछाल ,,
२२. ,, ,, रामगोपालजी मुछाल ,,
२३. ,, ,, सूरजमल बदरीनारायण ,,
२४. ,, ,, गङ्गाविष्णु जेठमल ,,
२५. ,, ,, फूलचन्द मोतीलाल ,,

२६. श्रीमान् सेठ नन्दराम मूलचन्द
२७. ,, ,, रामनाथ हणुतराम
२८. ,, ,, सीताराम जुहारमल
२९. ,, ,, किशनलाल हीरालाल
३०. ,, ,, रामजीवन बाबूलाल ,,
३१. ,, ,, जयनारायण रामचन्द्र ,,
३२. ,, ,, रामनारायण परशराम ,,
३३. ,, ,, राधाकृष्ण रामचन्द्र ,,
३४. ,, ,, चतुर्भुज गणेशीराम ,,
३५. ,, ,, मेघराज रामभगत् ,,
३६. ,, ,, लादूराम सीताराम ,,
३७. ,, ,, रामदयालजी शिवनारायण ,,
३८. ,, ,, शिवनारायणजी नेमाणी ,,
३९. ,, ,, हीरालाल गोपालदास ,,
४०. ,, ,, सरूपचन्द मथुरालाल ,,
४१. ,, ,, जयकिसनदास कलकत्तावाला ,,
४२. ,, ,, पन्नालाल रामबिलास ,,
४३. ,, ,, सूरजकरणजी माल्हू ,,
४४. ,, ,, चिरंजीलालजी जाजोदिया ,,
४५. ,, ,, राधावल्लभजी काबरा ,,
४६. ,, ,, किसनलाल जयनारायण ,,
४७. ,, ,, शिवनारायणजी धूडमलजी बजाज ,,
४८. ,, ,, रामनारायण हीरालाल ,,
४९. ,, ,, शिवनारायण रामचन्द्र राठी ,,
५०. ,, ,, पूलमचन्द तेजमल ,,
५१. ,, ,, दामोदरदास जनार्दनदास ,,
५२. ,, ,, रामकिसनदास अग्रवाला ,,

मद्रासी बाजे बजरहे हैं।

,,	श्रीमान् सेठ रामनारायणजी राजमल		बम्बई
५४.	,, ,,	गोरखरामजी सादूरको	,,
५५.	,, ,,	कस्तूरचन्दनलाल	,,
५६.	,, ,,	सुजाणमल लादूराम	,,
५७.	,, ,,	जीवनदास चोथमल	,,
५८.	,, ,,	चनरसजी जसेराज	,,
५९.	,, ,,	गोपालदास मोहनलाल	,,
६०.	,, ,,	रापरखदास परशराम	,,
६१.	,, ,,	रतनलालजी लछीराम	,,
६२.	,, ,,	रामचन्द्रजी सारडा	,,
६३.	,, ,,	रामसुख मोतीलाल	,,
६४.	,, ,,	लक्ष्मीनारायण गङ्गाधर	,,
६५.	,, ,,	राजाराम गिरधारीलाल	,,
६६.	,, ,,	सीताराम मदनगोपाल	,,
६७.	,, ,,	रामलाल गणेशीराम	,,
६८.	,, ,,	बलदेवजी बावोटी	,,
६९.	,, ,,	किसनलाल छोगालाल	,,
७०.	,, ,,	दामोदरजी मुवावड	,,
७१.	,, ,,	शिवजी रामजी रामनाथ	,,
७२.	,, ,,	श्रीनिवासदास बावरी	,,
७३.	,, ,,	छोटूरामजी झँवर	,,
७४.	,, ,,	सालग्राम नारायणदास	,,
७५.	,, ,,	चेनीरामजी जेसराज	,,
७६.	,, ,,	सन्तोषीराम रामसुख	,,
७७.	,, ,,	मूलचन्द बनसीलाल	,,
७८.	,, ,,	बदरीनारायणजी सोनी	,,
७९.	,, ,,	मोनीलालजी सोमानी	,,
			,,

८०	श्रीमान्	सेठ	हरगोपालदास जयन्तीलाल	बम्बई
८१	,,	,,	जयकिसनदास रामपाल	,,
८२	,,	,,	मुरलीधर जयनारायण	,,
८३	,,	,,	द्वारकादास पसारी	,,
८४	,,	,,	हजारीमल गोरधनदास	,,
८५	,,	,,	गङ्गारामजी जसराज	,,
८६	,,	,,	जसकरणजी पूरणमल	,,
८७	,,	,,	राधाकृष्ण नन्दलाल	,,
८८	,,	,,	रामनारायण घुगडलाल	,,
८९	,,	,,	रामचन्द्रजी	,,
९०	,,	,,	धनराज पोकरमल	,,
९१	,,	,,	तिलोकचन्ददलसुखराय	,,
९२	,	,,	रामचन्द्रजी सोमाणी	,
९३	,,	,,	नन्दरामजी रामदास	,,
९४	,,	,,	चोथमल मूलचन्द	,,
९५	,	,,	गोवर्धन वेणुप्रसादजी	,,

सूचना .

'विशेषाङ्क' वै+स भाग १४ के प्रथमाङ्क के साथ अर्थात् जनवरी १९२८ में प्रकाशित होगा एसी सूचना हम ने वै+स. भाग१३ के १२ वे अङ्क में दिया था किन्तु दो तीन कारणों से न तो वै+स. भाग १४ का प्रथमाङ्क ही निकल पाया और न विशेषाङ्क ही अब आज यह विशेषाङ्क हम प्रकाशित करते हैं और वै+स एप्रिल मे प्रकाशित होगा। आशा है ग्राहक महानुभाव इस देरी के लिये हमें क्षमा करेंगे। इस विशेषाङ्क में हमारा विचार था कि दिव्यदेश में तन मन धन से सहायता दनेवाले सेठ साहूकारों के भी चित्र लगावें किन्तु कई बार माँगने पर भी कुछ लोगों ने अभी तक अपने चित्र नहीं भेजे अत सेठ साहूकार लोगों के चित्रों का आयोजन इस में नहीं हो सका। दिव्यदेश सम्बन्धी एक रिपोर्ट अलग छपनेवाली है उस में इन चित्रों का आयोजन किया जायगा। इति।

व्यवस्थापक

॥ देवप्रतिष्ठा मुहूर्तासंबंधी ॥

॥ भविष्य दिग्दर्शन ॥

ज्येष्ठ शुद्ध २ शके १८४९ व ज्येष्ठ शुद्ध १० सह ११ शुक्रवार नक्षत्र चित्रा या दोन मुहूर्तांपैकीं ।ज्येष्ठ शुद्ध १० सह ११ चा मुहूर्त विशेष महत्वाचा शुभदायक व त्या मुहूर्तावर होणारी स्थापना राजवैभव परिस्थितीनें युक्त चिरस्थायी करणारा आहे। स्थापनेच्या कार्याकरिता ज्यागोष्टी ज्योतिषशास्त्रदृष्ट्या पहाव्या लागतात त्या सर्वगोष्टी या मुहूर्तास अत्यन्त अनुकूल अशाच आहेत । मुहूर्तलग्नाचे वेळीं पञ्चक अनुकूल आहे। त्याचप्रमाणें मुहूर्तलग्नास पाँच ग्रहोंचें पूर्णबल असून स्वक्षेत्रास मीनराशीत असलला गुरु लग्नावर व लाभस्थानावर अनुक्रमें शुभ व उच्च दृष्टीनें पाहत आहे। त्याचप्रमाणे लग्नाधिपती बुध आपल्या मिथुनराशीत आकाशकेंद्री बलसम्पन्न असा दशमस्थानीच आहे। 'केंद्री असलेला गुरु आणि तोही स्वत:च्या राशीत हा ' दोषाणा '' शतमिंदुज शतयुग शुको गुरुर्घातयेल्लक्ष कटक कोण गौगमिनचन्द्रौजस्वि०'' या वचनाप्रमाणें १ लक्ष दोषाँचा नाश करणारा व पूर्णशुभफल देणारा असा केन्द्रस्थानात आहे। त्यामुळें हा मुहूर्त सर्वश्रेष्ठ होय।

आपणाकडून मुहूर्ताबद्दलची जीं मतें आलीं आहेत त्यात काशीहून आलेल्या म० म० मुर्लीधरझ्या व म० म० अयोध्यानाथ यानीं लिहून पाठविलेल्या स्थापनाकुण्डलींत शुद्धनिरयन पञ्चाङ्गाप्रमाणें ज्येष्ठ शुद्ध १० सह ११ शुक्रवार या दिवशीं दुहूर्ताचे वेळीं चन्द्रकन्याराशीत माण्डला आहे तो चूक आहे। मुहूर्ताचे वेळीं म्हणजे कन्यालग्नाचे वेळीं चन्द्र तूळ राशीत आहे। कन्याराशीत चन्द्र माडण्याचा दोष हा हस्तदोष असा वा अगर नजरचूक असावी। त्यादिवशीं मुहूर्तलग्न कन्या व यजमानाचें जन्मलग्न धनु म्हणजे यजमानाच्या जन्मलग्नापासून दशमलग्न कन्या हें मु-

दुर्लभ, हा योग अपूर्व व चिरस्थायित्व दर्शवित आहे । व याचा अर्थ असा आहे की कर्त्याचें कर्मस्थान हें या देवस्थापना रूपानें उदितमार्गीच उच्चाकडे चाललें आहे । व त्याची निरन्तर वाढच होणार आहे ।

कर्त्याची राशि तूळ व देवस्थापन वेळची राशीही तूळच हे योगही कार्याची एकरूपता व अविभक्तस्थिति दर्शवित आहे ।

दशमकेंद्री स्वक्षेत्री बुध व त्याचाहीपेक्षा जोरदार असा सप्तम स्थानस्थित–केंद्री–गुरु हा लग्नसम्बन्धींचे व राहुकालसम्बन्धींचे सर्वदोष नाहिंसे करणारा असाच आहे । दशमात राहु जरी असला तरी त्यापासून कोणत्याही प्रकारें अनुमता येणें शक्य नाहीं । कारण राहु हा उग्रग्रह असून शिवाय तो सुमारें ९॥ अंशात आहे व तेथेंच असलेला बुध हा २१ अंशात आहे यामुळें राहुचे परिणाम कांहीही घडणार नाहीत ।

काशीहून आलेल्या मुहूर्तमतनिदर्शकपत्रात फक्त कन्यालग्न दिलेलें आहे परन्तु नक्की मुहूर्ताची वेळ दिलेली नाही । त्यामुळें स्थापना करण्याची वेळ कोणती याबद्दल शंका राहते । तशी शंका राहू नये म्हणून नक्की वेळ खालीं देत आहो ।

ज्येष्ठ शुद्ध १० सह ११ शुक्रवार शके १८४९ ता० १० जून सन् १९२७ या दिवशीं दुपारीं स्टॅं टाईम १२ वाजून २२ मिनीटापासून १२ वाजून ३४ मिनीटापर्यन्त हा काळ स्थापनेचा मुहूर्तकाळ होय । यावेळीं कन्यालग्नाचा कन्या नवमांश म्हणजे कन्यालग्न हें वर्गोत्तम लग्न येतें । लग्न वर्गोत्तमी असणें हें अतिशय शुभ होय । अशी शुभस्थिति या मुहूर्तात आहे । म्हणून हा मुहूर्त व ही वेळ सर्वप्रकारें श्रेष्ठ समजावी ।

पण्डित रघुनाथशास्त्री, पटवर्धन, ज्योतिषी
ज्योतिषरत्न, ज्योतिषपुरस्कर,
पुणे ता २–४–२७

कांच्यां—श्रीसुदर्शनमुद्रायन्त्रालये क्रय्याणि पुस्तकानि .

वैदिक ग्रन्थाः ।

न.	नाम	रु	आ
१.	श्रीसूक्तभाष्यम्.	०	२
२.	पुरुषसूक्तभाष्यम्	१	०
३.	तैत्तिरीयोपनिषद्भाष्यम्	३	०
४.	सन्ध्यावन्दनभाष्यम्	०	८

वेदान्त ग्रन्थाः ।

न.	नाम	रु	आ
५.	शतदूषणी भा—१	४	६
६.	शतदूषणी भा-२	३	१२
७.	शतदूषणी भा—३	३	१२
८.	शतदूषणी भा ४	३	१२
९.	भगवद्गीता प्रतिपदार्थविवरणसहिता	२	२
१०.	भगवद्गीता-वरवरमुनिव्याख्यासहिता	२	४
११	गीतार्थसंग्रहः रक्षया सहितः	०	६
१२.	तत्वनिर्णय (शैववैष्णववाद)	०	४
१३.	सिद्धान्तचिन्तामणि	०	१
१४.	पाराशर्यविजयः (प्रथमाध्यायप्रथमपादः)	४	०
१५.	यतिलिङ्गसमर्थनम्	०	४
१६.	प्रपन्नपारिजातः	०	४
१७.	न्यायभास्करः जगन्मिथ्यात्वखण्डनं	१	८
१८.	भेदवादःतत्क्रतुन्याये विचारश्च	०	६
१९.	दृश्यत्वानुमाननिरासवादःमोक्षकारणतावादश्च	०	४
२०.	कार्याधिकरणवादःभा१	०	१०
२१.	कार्याधिकरणवाद.भा२	१	०
२२.	कार्याधिकरणतत्वम्	०	१४

मीमांसा ग्रन्थाः ।

न.	नाम	रु	आ
२३.	भाट्टरहस्यम्	१	८
२४.	मीमांसापादुका	०	७
२५.	मीमांसाकौस्तुभःभा १	१	४
२६.	मीमांसाकौस्तुभःभा४	१	६
२७.	मीमांसाकौस्तुभ.भा	१	६
२८.	सेश्वरमीमांसा	१	१४

न्याय ग्रन्थाः ।

न.	नाम	रु	आ
२९.	प्रामाण्यवाद.	३	२
३०.	अवच्छेदकतानिरुक्तिः	०	१५
३१.	बाधगादाधरी	०	१५
३२.	मूलगादाधरीये शब्दखण्ड	१	४
३३.	शतकोटि.	०	६
३४.	उपाधिवाद गदाधरस्य	१	१४
३५.	गादाधरी चतुर्दशलक्षणी	१	१४
३६.	गादाधरी पञ्चलक्षणी	०	८

सुदर्शनमीमांसा .

तप्तचक्राङ्कनावश्यकत्वस्थापनपरोऽयं प्रबन्धः ... तेन श्रीवेदव्यासभट्टारकतनयवरेण श्रीवेदाचार्यभट्टार्येण लक्ष्मणसूरिणा प्रणीतः अत्रैव सम्मुद्रितः कलादशकमूल्यको विक्रीयते ।

—o—

ऐकशास्त्र्यमीमांसा .

महर्षिजैमिनिबादरायणप्रणीतयोः पूर्वोत्तरमीमांसयोः कर्मब्रह्मकाण्डयोरैकशास्त्र्यं समर्थयन्ती, परेषां कुचोद्यानि च परास्यन्ती, इदम्प्रथमतः प्रणीता सेयं कृतिर्देवनागराक्षरैर्बहुचिक्कणपत्रेषु सुष्ठु सम्मुद्रिता श्रीसुदर्शनयन्त्रालये विक्रीयते । मूल्यमर्धरूप्यमात्रम्

— o —

वडवानलः .

इदं नाम किञ्चन वादग्रन्थः श्रीकाञ्चीप्रतिवादिभयङ्करमठाधीश्वरैः जगद्गुरु—श्रीमदनन्ताचार्यैरनुगृहीतो देवनागराक्षरैः सुष्ठु सम्मुद्रितो विक्रयाय च सज्जो वर्तते । श्रीवल्लभाचार्यसम्प्रदायावलम्बिना केनापि श्रीरामानुजसिद्धान्तोपरि समुत्थापितानां कुचोद्यानां सम्प्रतिपत्त्या समाहितमासन्ति पुस्तकेऽस्मिन् । अतिसरलसंस्कृतभाषया समर्थितस्यास्य मूल्यमर्धरूप्यमात्रम् ।

—•—

दुर्वादविधूननम् .

१९१८ तमे क्रैस्ताब्दे जगद्गुरु—श्रीमदनन्ताचार्यचरणानां कर्नाटकसञ्चारसमये तत्रत्यैर्वैतद्वादिभिः श्रीस्वामिचरणसन्निधाने श्रीरामानुजसिद्धान्तोपरि केचन दुराक्षेपा उत्थापिता इति विश्वप्रसिद्धमेतत् । तदानीं तदीयदुराक्षेपाणां समीचीनसमाधानरूपमिदं पुस्तकं श्रीस्वामिनामाज्ञया तद्वा विद्वद्भिरास्थानपण्डितैः प्राकाश्यत । अस्माकं श्रीवैष्णवानामवश्यमवेक्षणीयमिदं पुस्तकमित्यत्र नास्ति सन्देहः । देवनागराक्षरैर्मुद्रितस्यास्य मूल्यमर्धरूप्यमात्रम् । प्राप्तिस्थानम् श्रीकाञ्ची—सुदर्शनयन्त्रालयः ।

२९ श्रीयुत– दरलाल भीमराजजी.
३० " सण्डीमहाजन एसोसियेशन.
३१ " पृथ्वीराज भगवानदासजी.
३२ " रामजी—सत्री.
३३ " फूलचन्दजी मोतीलालजी.
३४ " खुसालचन्दजी गोपालजी.
३५ " रामचन्द लच्छीनारायणजी.
३६ " शिवराम सदारामजी.
३७ " रामदयाल सोमानी— कम्पनी.
३८ " मथुरादास गोविन्ददास मन्त्री.
३९ " पञ्चमुखी हनुमानजी का स्थान.
४० " वैद्य केदारनाथजी— मूलेश्वर.
४१ " रणछोरजी का मन्दिर.
४२ " जगदीशजी का मन्दिर.
४३ " नरसी भगत की रगूवाई.
४४ " बालकृष्ण हरिसहायजी केडिया.
४५ श्रीमती गङ्गाबाई.
४६ श्रीयुत– रामगोपाल हीरालालजी.
४७ " नन्दराम रामरतनजी.
४८ श्रीमती- भगीरथी बाई.
४९ श्रीयुत- धूलमलजी बजाज.
५० " लच्छीरामजी बजाज.
५१ " रामकुमार हनुमानबक्सजी सिंहानिया.

इत्यादि इत्यादि।

स्थान स्थान पर भगवान के विमान ठहरने और पूजा आरती होने से जुलूस की भीड बढ जाया करती थी और ट्राम की सडक थी

किन्तु फिर भी जो पोलिस अधिकारी साथ साथ प्रबन्ध कर रहे थे उनकी चतुराई और स्काउट के सञ्चालकों के प्रबन्ध से कहीं कोई दुर्घटना नहीं हुई और जुलूस स्वच्छन्द रूप से चलता रहा। भगवान् के विमान के पीछे मद्रास की भजनमण्डली थी जिस के मधुरस्वर श्रोताओं को मुग्ध कर रहे थे और उन के शब्दार्थों को न जानते हुए भी श्रोतागण बड़े चाव से उनके भजन और भाव से प्रसन्न हो रहे थे। सब के पीछे हमारे भारत की महिमा बढानेवाली माताओं, बहिनों और बेटियों की मण्डली थी, ये भगवद्गुणानुवाद में लीन बरसते हुए पानी में अपनी सुधबुध भूली हुई हरिभक्ति की सुधाधारा में निमग्न हो रही थीं, यह मण्डली पीछे थी किन्तु भगवद्भक्ति में किसी से पीछे न थी, यह मण्डली बतला रही थी कि पीछे रहने से कोई छोटा नहीं हो सकता, सेना का नायक पीछे ही रहता है और सब से बड़ा होता है हां भगवद्भक्ति में पीछे नहीं रहना चाहिये और योंतो हम भारतीय महिलायें, हम पतिप्राणमहिलायें अपने को अपने प्राणपति की छाया के समान पीछे ही रहने में अपने को सौभाग्यवती और सुखी मानती है। हमारा आदर्श, अन्तःकरण की परीक्षा और धर्म पतिपरायणा होना है न कि पतिस्पर्धिनी होना। हम चाहती है कि अपने प्राण पतियों को अपने भाइयों और बेटों को आगे करके अपने धर्म की वेदी पर सर्वस्व अर्पण करने के लिये चलें और उनको अपने कर्तव्य से च्युत न होने दें ऐसा नहो कि वे हमारे पीछे रहकर अपने सत्यपथ से विचलित हों जॉय क्यों कि वेही हमारे प्राण है, वे ही हमारे आधार हैं और उन्हीं पर हमारा जीवन निर्भर है। वह मण्डली मानों नयी सभ्यता को शिक्षा देकर कह रही थी कि सुधरी हुई बहिनों तुम यदि बड़ी बनना चाहती हो, अपने कुटुम्ब का देश का और समाज का सुधार करना चाहती हो तो संसारयुद्ध में अपनी सेना के पीछे किन्तु ऊंचे स्थान ऊंचे विचार से देखो तो! तुम्हारे बेटे, तुम्हारे भाई और पति—

प्राणपति तथा जन्मदाता पिता अपनी जननी जन्मभूमि, अपने प्राणस्वरूप धर्म और अपने कर्तव्य से विचलित तो नहीं हो रहे हैं, अपने इशारों और कार्यों से उन को संसाररूपी युद्ध में सहायता दो और केकई के समान देश के दशरथ को विजय कराओ। जुलूस में अपार भीड थी, भगवान् इन्द्रदेव भी रहरहकर अपनी मन्द मन्द वर्षा से भगवान् और उन के भक्तों की सेवा कर रहे थे। स्थान स्थान पर चित्रकारों ने जुलूस के चित्रों को खींचा जिन में से कतिपय चित्र आप इसी पत्र में देखेंगे किन्तु वर्षा के कारण अधिक चित्र खींचे नहीं जासके। जिस समय भगवान् की सवारी का जुलूस गीतापाठशाला से नगरी के मुख्य मुख्य स्थानों और मार्गों को होता हुआ दिव्यदेश मन्दिर के द्वार पर पहुंचा उस समय की शोभा, उस समय की भीड और दर्शकों के शान्तमय आनन्दितभाव लेखनी से लिखे नहीं जासकते वह सब दृश्य देखने ही योग्य था। अस्तु जुलूस दिव्यदेश मन्दिर के सामने आगया और पूर्णमासी के समुद्र के समान दर्शकों की भीड उमडा उठी। भगवान् की सवारी मन्दिर के द्वार पर आजाने पर मुम्बई को पवित्र करने वाले तपोमूर्ति श्री १००८ श्रीजगद्गुरु महाराज ने हाथ में माङ्गलिक वस्तुओं के सहित सुवर्णकलश को लेकर भगवान् का स्वागत कर यज्ञ-शाला में पधराया और दर्शकों की भीड भक्तों के झुण्ड भगवान् के गुणानुवाद के साथ ही आचार्यचरण के गुणानुवाद गाते हुए अपने अपने स्थान को रवाना हुए।

थोडे ही दिन पहले इसी नगर में शिवाजी महोत्सव के उपलक्ष्य में जुलूस के साथ हाथी निकालने की आज्ञा सरकारी अधिकारियों ने नहीं दी थी किन्तु इस समय उन्हीं अधिकारियों ने हाथी निकालने में आपत्ति नहीं की इस विषम समस्या पर कुछ लोगों ने दृष्टि डाली किन्तु, इस विषम समय में हमें इस प्रकार के कार्यों में आश्चर्य नहीं मानना चाहिये और उस समय तक गम्भीरता के साथ अपने कर्तव्य पथ पर

बराबर आगे बढने की ओर ध्यान देना चाहिये जबतक इन छोटी मोटी बातों की तो बात ही दूसरी है हम अपने देश के समस्त कार्यों में चाहे वे धार्मिक हों, सामाजिक हों और चाहे राजनीतिक हम पूर्णरूप से स्वतन्त्र न होजॉय। जुलूस के कार्य समाप्त हो जाने के पश्चात् कुछ समय विश्राम कर दूसरा कार्य आरम्भ हुआ। दिन में १२ बजे से मानोन्मान, शान्तिहोम आदि वैदिककार्य होते रहे और २ बजे दिन में रक्षाबन्धनविधान हुआ इस के पश्चात् ३ बजे दिन से जलाधिवास कर्म का आरम्भ हुआ। एक ओर ये वैदिककर्म हो रहे थे और दूसरी ओर प्रतिष्ठामहोत्सव को यथानाम तथागुण बनानेवाली नगरी के निवासियों की उपस्थिति, भक्ति और भावनायें चित्र को आकर्षित कर रहीं थीं। जिस भक्तिभाव से लोग यज्ञशाला के पास जाकर वैदिकमन्त्रों का पाठ सुनते थे वह अनुकरणीय और प्रशसनीय था।

ज्येष्ठ शुक्ल ७ सोमवार को यज्ञारम्भ का दिन था। प्रातःकाल ८ बजे वैदिकरीति से वास्तुपूजा की गयी और १२ बजे नयनोन्मीलन कार्य हुआ। मध्याह्नोत्तर तीन बजे से महाभिषेक का कार्य आरम्भ हुआ। महाभिषेक होजाने के पश्चात् सन्ध्यासमय शयनाधिवास कराया गया। रात में ८ बजे से मण्डपकल्पना, मण्डलपूजा और महाकुम्भ की स्थापना के पश्चात् यज्ञारम्भ किया गया। इतना ही नहीं यज्ञमण्डप के चारों द्वार पर अलग अलग चारों वेदों का पाठ होता था। पूर्वद्वार पर ऋग्वेद, दक्षिण द्वार पर यजुर्वेद, पश्चिम द्वार पर सामवेद और उत्तर द्वार पर अथर्ववेद का पाठ होता था। यजुर्वेद की तैत्तिरीयशाखा, माध्यन्दिनीय शाखा और काण्वशाखा के पाठ पृथक् पृथक् होते थे। अथर्ववेदी विद्वान् काशी जी से बुलाये गये थे। वेद पाठों के अतिरिक्त महाभारत तथा श्रीमद्भागवतादि पुराणों और पुण्यस्तोत्रों के पाठ भी अत्यधिक सख्या में विद्वान् ब्राह्मण लोग कर रहे थे जो यज्ञशाला की शोभा बढाते हुए आस्तिक हिन्दुओं की प्रसन्नता को बढा रहे थे।

यज्ञशाला की वेदियों और विधिविहित हवनकुण्डों की भिन्नभिन्न आकृतियों को देखकर सूत्रकार महर्षियों की सूत्ररूप से रेखागणित की विद्वत्ता और उपदेश– यज्ञ के व्याज से रेखागणित का उपदेश स्मरण आजाता था। पाँचों कुण्डों में नियम के अनुसार नित्य ही हवन होता था और प्रतिष्ठायज्ञ के हवनधूम्र से मुम्बई की दूषितवायु– मुम्बई का धार्मिक वायुमण्डल शुद्ध और परिष्कृत हो रहा था। वेदों, पुराणों और स्तोत्रों के पुण्यपाठ सुनने के लिये नित्य ही नगर के सहस्रों श्रद्धालु सज्जन आते और अपूर्व आनन्द में मग्न होकर चित्र लिखेसे बन जाते थे, वैदिकपाठों के सुनने में उन का हृदय आनन्द से विह्वल हो जाता था और वे सज्जन अपने घर द्वार के, व्यापार और बाजार के कारबार भूल जाते और खडे खडे अपने कर्णों को पवित्र करते थे, वह भक्तिभावना और अपने धर्मग्रन्थों के पुण्यपाठ श्रवण की श्रद्धा का प्रत्यक्ष दृश्य देखते ही बनता था। पाठ करनेवाले विद्वानों और पण्डितों की नामावळी बहुत बडी है उन वरणी पण्डितों की नामावळी देना यहां आवश्यक नहीं किन्तु इतना ही कहदेना पर्याप्त है कि मन्दिर का उत्तर भाग पण्डितों से पाठक पण्डितों से परिपूर्ण था।

ज्येष्ठ शुक्ल ८ मङ्गळवार को तत्वहोमन्यास की विधि होती रही। सारे दिन इसी विधि की वैदिक क्रियायें और होम होता रहा। अन्त में भगवान् जगद्गुरु महाराज ने यन्त्रन्यास विधि की। मूलविग्रह के शङ्कु स्थापन के स्थान पर यथाविधि पूजन कर माङ्गलिक वेदध्वनि और वाद्य ध्वनि तथा नानाप्रकार के वाजों की तुमुलध्वनि के साथ यह यन्त्रन्यास विधि भी पूर्ण हुई। आज के दिन भी नगरवासी सेठों और साहूकारों अमीरों और गरीबों के घर की आबाल वृद्ध वनितायें दर्शनों और यज्ञस्थल के धार्मिक पुण्य पाठों के सुनने के लिये बराबर आते और अपने को कृतकृत्य मानकर जाते थे।

ज्येष्ठ शुक्ल ९ बुधवार को प्रासाद और विमान प्रतिष्ठा तथा रत्नन्यास विधि की गयी। मन्दिर के मुख्य दो भाग होते हैं भूमि से लेकर छत पर्यन्त को प्रासाद कहते हैं और उसके ऊपर के भाग को विमान। इन्ही दोनों भागों की आज प्रतिष्ठा की गयी और मूलविग्रह स्थापन के मूल स्थान में यन्त्रन्यास किया गया। इस विधि में नवधान्य, नवधातु और नवरत्नों की स्थापना होती है और उसके ऊपर श्रीवेङ्कटेश यन्त्र की स्थापना जो श्रीचरणों ने स्वयं करकमलों से की। आरम्भ में यथा हवन आदि क्रियायें की गयीं और फिर तुमुलवाद्यध्वनि और जयध्वनि के साथ न्यासविधि की गयी।

ज्येष्ठ शुक्ल १० गुरुवार को भी हवन पाठ होता रहा और पिण्डिकास्थापन, अष्टबन्धन और रक्षाबन्धन के विशेष कार्य हुए। आज भी सदा की भांति दर्शकों की अपार भीड थी और लोगों को वैदिक विधि की प्रतिष्ठा देख आनन्द और धर्मस्रोत का मानसिक स्नान का आनन्द प्राप्त हो रहा था।

ज्येष्ठ शुक्ल १० शुक्रवार तदनुसार ता: १० जून सन् १९२७ ईसवीय। आज ही दिव्यदेश मन्दिर में मुम्बईनिवासी हिन्दुओं के आराध्यदेव भगवान् श्रीवेङ्कटेश जी की प्रतिष्ठा होगी, आज ही यह मोहमयी नगरी—— मुम्बई सनाथ होगी और दिव्यदेशरूपी पवित्र तीर्थ स्थान बनेगी इस की खबर मुम्बई नगरी के घर घर में पहले ही से पहुँच चुकी थी। आज ही प्रतिष्ठायज्ञ की पूर्णाहुती होगी और प्रतिष्ठा महोत्सव का आज अन्तिम दिन है यह समाचार भी सब लोग सुनचुके थे सब जानते थे कि मध्याह्न काल में भगवान् की प्रतिष्ठा होगी किन्तु प्रातःकाल से ही दर्शकों की अपार भीड एकत्र होने लगी और मन्दिर के अन्दर और बाहर यहां तक कि मन्दिर के द्वार की सडक पर भी इतनी अधिक भीड हो गयी कि उस मार्ग से सहज में निकल जाना असम्भव होगया। एक ओर जनता की उत्साहपूर्ण भीड एकत्र हो

रही थी और दूसरी ओर प्रतिष्ठासम्बन्धी विधियों की आज ही पूर्ति होने को थी अतएव आज प्रातःकाल से १० बजे रात्रि के समय तक इस प्रकार विधियाँ हुईं और उन की इतनी अधिक संख्या है कि जिन का पूर्णरूप से वर्णन करना कठिन है। एक एक विधियों के अन्तर्गत अनेक विधियाँ होतीं थीं जिन का लिखना मानो प्रतिष्ठा की एक पद्धति बनाना है। संक्षेप में उन का दिग्दर्शन कराया जासकता है जैसे—मण्डपपूजा के द्वारा द्वारदेशों के समस्त देवताओं की यथाविधि पूजा की गयी। अनन्तर चक्राब्जमण्डल पूजा का विधान हुआ। कुम्भ पूजा के द्वारा अष्टमण्डल के समीप स्थापित रजत और ताम्र कलशों की पूजा की गयी। इस के पश्चात् नित्य हवन, शान्तिहवन हुए और फिर समस्त बाजे गाजे और नगाडे एक साथ बजने लगे, चारों ओर अपारदर्शकों की भीड से जयजयकार की ध्वनि होने लगी, विद्वान् याज्ञिकब्राह्मणों ने वेदमन्त्रों के उच्चारण किये और यथोपस्करयुक्त नारियल आदि से पाचों कुण्डों में पूर्णाहुति की गयी। यज्ञकार्य समाप्त हुआ और पूर्व ही से सजे हुए स्वर्णमय विमान पर भगवान् विराजमान हुए। जिस समय भगवान् विमान पर विराजमान हुए और सम्मिलित बाजे बजने लगे, जयजयकार ध्वनि से दिव्यदेश मन्दिर ही नहीं सारी मुम्बई नगरी प्रतिध्वनित हो उठी उस समय का दृश्य वर्णनातीत है। उस समयका अपूर्व दृश्य स्मरण करके आनन्द के समुद्र में हृदय मग्न होने लगता है और भगवान का वह वचन स्मरण आने लग जाता है—

" यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥"

[अर्थात्—जब जब धर्म में ग्लानि पैदा होती है—लोग धर्म से विमुख होने लगते है और अधर्म का अभ्युत्थान-अधर्म की ओर लोग प्रवृत्त होते हैं तब हम अवतार रूप से अपने आप को प्रकट करते हैं] उस समय दर्शकों के हृदयों की उमङ्गों का रोकना असम्भव होगया
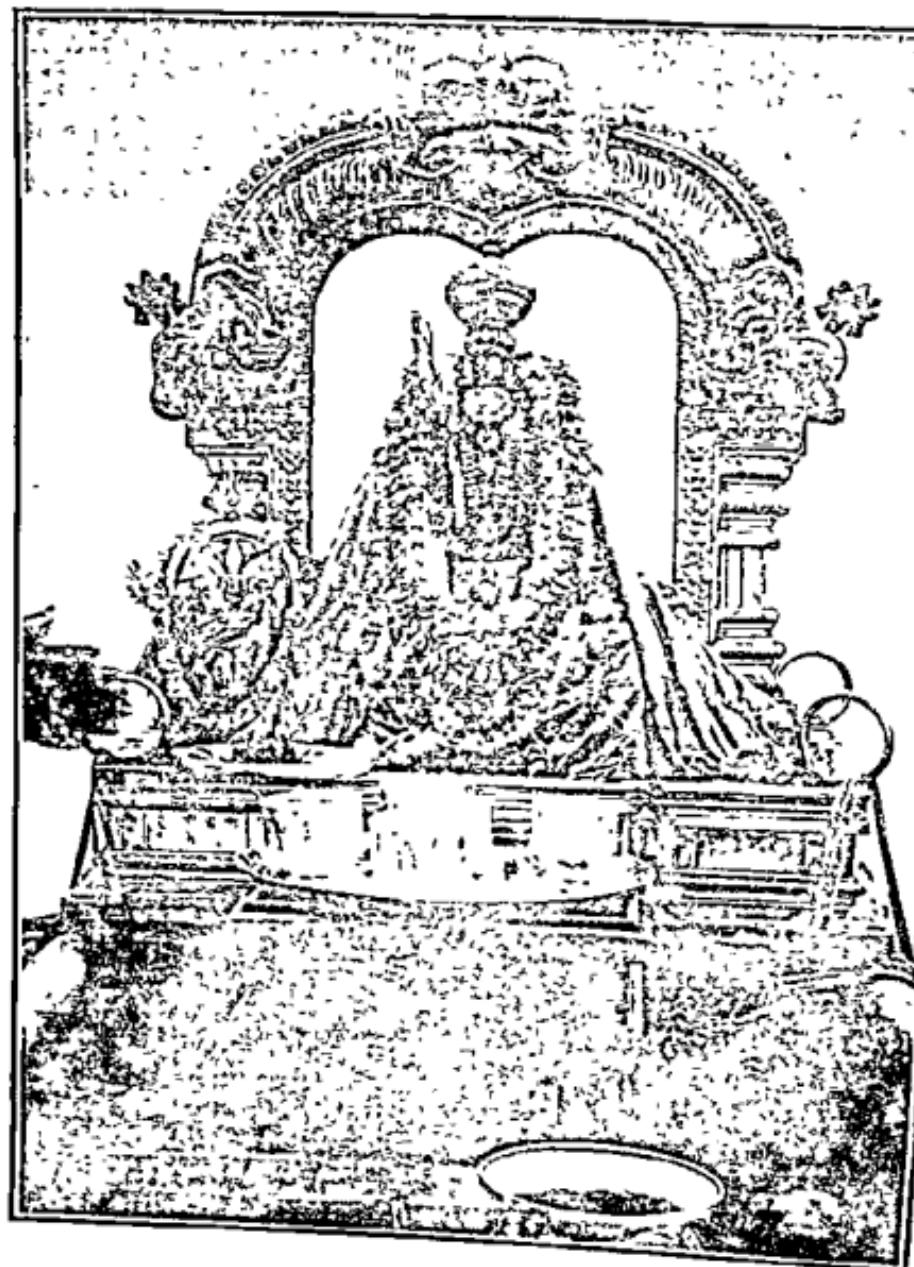
श्री यथोक्तकारी भगवान ।

और आबाल वृद्ध वनिताओं का समुदाय जो प्रातःकाल ही से भगवद्दर्शनों के लिये एकत्र हो रहा था एकदम उमड पडा और प्रबन्ध रूपी बांध दर्शकों के प्रेमप्रवाह से टूटगया उस समय दिव्यदेश मन्दिर के आँगन में चारों ओर ऐसी रेलपेल मची किं जिसका वर्णन करना कठिन है। भगवद्भक्ति में, दर्शनों की अभिलाषा में और इस धुन में कि हम पहले दर्शन पावें सब लोग अपनेआप को भूलगये थे सभी दर्शक चाहते थे कि हम शीघ्र से शीघ्र ही दर्शन कर के अपने जन्म कर्म और मनोरथ को सफल बनावें। प्रबन्ध टूटगया और अपार भीड भरगयी किन्तु कोई भी दुर्घटना नहीं हुई क्यों कि सभी शान्तभाव से पूर्ण थे सत्त्वगुण के चित्र से सब चित्रित थे और एक दूसरे को कष्ट देना नहीं चाहते थे। धीरे धीरे भगवान का विमान मन्दिर की ओर बढा और दर्शकों के मनोरथ सिद्ध हुए। मन्दिर में जाकर भगवान् की उत्सवविग्रह, श्रीदेवी और भूदेवी की विग्रह यथास्थान स्थापित की गयीं उसी समय अपने अपने मन्दिरों में श्रीजगन्माता महालक्ष्मी और श्रीभगवान् भाष्यकार रामानुजस्वामी की मूर्तियाँ स्थापित और प्रतिष्ठित की गयीं। समस्त आल्वारों की तथा अन्यान्य अनेक भगवन्मूर्तियों की भी यथास्थान स्थापना और प्रतिष्ठा की गयी। मूर्तियाँ दो प्रकार की होती हैं एकतो अचल दूसरी उत्सवादि के अवसर पर चल, इन दोनों ही प्रकार की समस्त मूर्तियों की सविधि प्रतिष्ठा की गयी। महाकुम्भ प्रोक्षण के पश्चात् यन्त्रन्यासविधि हुई और तब पोडशोपचार की पूजा हुई। पूजा के पश्चात् सर्वस्व दान का विधान कर के श्रीमदाचार्यचरण ने संस्कृतश्लोकों में भगवान् से प्रार्थना की [श्लोक अन्यत्र दिये गये हैं] आर्ती होने के पश्चात् थोडी देर के लिये पट बन्द हुआ और फिर पञ्चामृत, सर्वौषधि, सहस्रधारा आदि अनेक स्नानविधियों से महाभिषेक किया गया। इन कार्यों में बहुत अधिक समय लगा किन्तु दर्शकों की भीड कम नहीं हुई और बडी उत्सुकता गौरव श्रद्धा भक्ति से गद्गद हुए सब

के सब दर्शक खड़े खड़े देख रहे थे किसी के चेहरे पर उदासी अथवा ग्लानि का चिह्न दिखाई नहीं देता था । महाभिषेक हो जाने के पश्चात् वस्त्रालङ्कार से अलंकृत भगवान् के सामने वेदों और वेदाङ्गादि समस्त शास्त्रों की— जिनका पाठ प्रतिष्ठा के उपलक्ष्य में हुआ था—समाप्ति की गयी और तब तीर्थ प्रसाद का विनियोग हुआ तथा उपस्थित जन समूह में तीर्थ प्रसाद वितरण किया गया । एक साथ सहस्रों नरनारियों को तीर्थ प्रसाद लेते देख कर हृदय में अपूर्व आनन्द और अलौकिक भाव उत्पन्न हुआ जिसका वर्णन करना लेखनी की शक्ति से बाहर है ।

दिव्यदेश मन्दिर में मूलविग्रह की प्रतिष्ठा मुम्बई के सूर्योदय के उपरान्त १६ घड़ी २४ पळ और ३० विपल पर सिंहलग्न में हुई * तदनुसार भगवान् श्रीवेङ्कटेशजी के अवतारलग्न कुण्डली का विचार भी किया गया है । कुण्डली का विस्तृत वर्णन अन्यत्र दिया गया है जिसके फलों को देख कर दिव्यदेश के भविष्य से श्रीवैष्णव समुदाय का भविष्य अतीव उत्तम प्रतीत होता है । एक ही इष्ट में दो पण्डितों के मत से एक ही स्थान में दो लग्न का होना सर्वथा असम्भव सी बात है किन्तु यह अपूर्व दृश्य भी इस अवसर पर देखा गया ।

प्रतिष्ठाविधि सकुशल परिपूर्ण हो गयी । सारी नगरी में गली गली और घर घर में प्रतिष्ठा की ही चर्चा चारों ओर चल रही है । लोग मोहमयी नगरी के देवस्थानों और आचार्यों की तुलनात्मक दृष्टि से चर्चा कर के तपोमूर्ति जगद्गुरु महाराज की सहस्रमुख से प्रशंसा कर रहे हैं । दिव्य देश मन्दिर की स्थापना से जिस अभाव की पूर्ति हुई है उसका अनुभव करते हुए धर्मप्रेमी हिन्दूमात्र अपनी नगरी का सौभाग्य और अपने को धन्य धन्य मान रहे हैं ।

---

* प्रतिष्ठा के लिये जिन ज्योतिर्विदों ने मुहूर्त निकाला था उनके अभिप्राय से कन्या लग्न में प्रतिष्ठा हुई थी । तदनुसार फलादेश भी अन्यत्र वर्णित है ।

प्रार्थना ।

(श्रीमदाचार्यचरणरचित ।)

आगच्छ देव जगतामधिनाथ विष्णो ।
श्री श्रीनिवास शुभवेंकटशैलवास ॥
बिम्बे शुभेत्र चिरसन्निहितः कृपालो ।
मां पाहि पूरय च भक्तमनोरथां स्त्वम् ॥
श्रीवेंकचटालपते नगरेत्र मोह—
मय्यां शुभेत्र निलये निवसन् दयालो ॥
दूरीकुरुष्व हृदये निहितं जनानां
मोहं, प्रदेहि निज पादयुगे च भक्तिम् ॥
धर्मस्य रक्षणकृते हि तवावताराः
भूयो भवन्ति तदिहाद्य कलौ युगेस्मिन् ॥
अर्चासमाधि मुपगम्य चिरं वसंस्त्वं ।
रक्षां विधेहि शुभधर्मपथस्य देव ॥

भगवान श्रीवेंकटेश जी का सवारी ।

" जीवन् हि धीरो ऽ भिमतं किं नाम न यदाप्नुयात् । "

अर्थात्—यदि मनुष्य धैर्य धारण करे और जीता रहे तो संसार में वह कौनसी वस्तु है जो नहीं पासकता ।

आज मुम्बई निवासी भगवज्जनों की बहुत दिनों की मनः कामना पूरी हुई है और यही कारण है कि नगरी के कोने कोने में प्रतिष्ठा महोत्सव का उत्साह दिखाई दे रहा है, किसी विज्ञापन और ढिंढोरा पीटने की आवश्यकता नहीं आज सारी नगरी के भगवज्जन दिव्य-देश की प्रतिष्ठा के प्रत्येक कार्य में प्रत्येक समय अधिक से अधिक

संख्या में भाग ले रहे हैं। आज प्रतिष्ठाविधि पूर्ण हो गयी है और रात्रि में भगवान् श्रीवेङ्कटेश जी की सवारी निकलेगी, आज भगवान् पतितपावनभगवान् अशक्तों, पतितों और मन्दिर के अन्दर जिन के जाने की आज्ञा शास्त्रानुसार नहीं है उन प्राणियों की भक्तिभावना से भरी दर्शनकामना पूरी करेंगे आज भगवान् समग्र रूप से सड़कों पर यात्रा करते हुए सभी दर्शनाभिलाषी पुण्यात्माओं को दर्शन देंगे और सभी का उद्धार करेंगे ऐसा समाचार नगरी में प्रात काल ही से फैल चुका था अतएव सन्ध्या होते ही दर्शनार्थी जनसमूह स्थान स्थान पर अपने अपने मार्गों, घरों और द्वारों पर दर्शन की आशा लगाये हुए, एकमन और अचलतन से हो रहे थे। इसी बीच में दिव्य देश मन्दिर से भगवान् की सवारी निकली यह पहला ही दिन और समय था जब मुम्बई नगरी में मुम्बई निवासियों के आराध्य देव भगवान् श्रीवेङ्कटेश जी। की सवारी निकल रही है ऐसे समय के जनोत्साह का वर्णन करना सरल काम नहीं। भगवान् की सवारी गरुडवाहन पर निकली और जुलूस इतना विशाल और शान्तमय था कि देखकर यही प्रतीत होता था कि किसी जनसमूह में शान्तभाव, मनोरथ सिद्धि से, मनोनुकूल दृश्य और श्रवण से हो सकता है प्रबन्ध से नहीं। जुलूस के मुख्य प्रबन्धकर्ता थे रायसाहब श्रीसेठ रङ्गनाथ जी और श्रीनिवास जी। आप दोनों ही भाइयों ने प्रतिष्ठा महोत्सव के आरम्भ से ही जिस उत्साह और परिश्रम से रात दिन के अविच्छिन्न परिश्रम से कार्य किया है वह दूसरे भगवज्जनों के लिये दूसरे श्रीमानों के लिये और दूसरे श्रीवैष्णवों के लिये आदरणीय अनुकरणीय है। आप के श्रीवेङ्कटेश्वर प्रेस की भजनमण्डली का भजनभाव देख कर लोग मुग्ध हो जाते थे। यद्यपि यह जुलूस रात्रि के समय निकला तथापि बड़ी ही धूमधाम से निकला यह जुलूस ८ बजे से मन्दिर से चलकर २ बजे रात में लौटकर आया इसी से लोगों के उत्साह का परिचय

मिलसकता है । जुलूस के आगे आगे विजय के नगाडे बज रहे थे वे नगाडे मानों मुम्बई के सोते हुए मनुष्यों को जगा जगा कर कह रहे थे कि भक्तवत्सल भगवान् श्रीविङ्कटेश जी आज मुम्बई नगरी के हृदयस्थल में स्वर्णसिंहासन पर नहीं, दिव्यदेशरूपी सिंहासन में विराजमान हैं और अर्थ, धर्म, काम, एवं मोक्ष रूपी चारों पदार्थ वितरण कर रहे हैं जागो उठो और अपने मनोरथ को सफल करो इतना ही नहीं आज पतितपावन भगवान् उन सभी श्रद्धावान् भक्तों को जो अपनी जाति की मर्यादा के कारण मन्दिर के अन्दर जाकर दर्शन करने में अनधिकारी हैं वे आवें और खुले मैदान महान जनसमूह के सामने भगवान के दर्शन करें और अपने मनोरथ सफल करें । मानो ये नगाडे अछूतोद्धार के प्रचारकों को प्रचारित कर रहे थे कि अरे देशसेवा के भटके हुए पथिको, शास्त्र की मर्यादा को न जाननेवाले जानकारो और भगवान् के दर्शनों के करने कराने की सच्ची श्रद्धा और भक्ति रखनेवालो तुम कहां हो किस गाढी निद्रा में पडे हो आओ और अपने अछूत भाई बहिनों के साथ आओ और शास्त्र की मर्यादा को रखते हुए भक्तवत्सल पतितपावन भगवान् श्रीवेङ्कटशजी का खुले मैदान दर्शन करो और अपने अछूत भाइयों और बहिनों को दर्शन कराओ यह समय सोने का नहीं है आओ विलम्ब न करो नहीं तो यह अलभ्य दर्शन का लाभ दुर्लभ हो जायगा और फिर लोग यही समझेंगे कि तुम में दर्शनकरने की श्रद्धा नहीं, भगवान् के प्रतिभक्ति नहीं केवल शास्त्र की मर्यादा मिटाने की दुराभिलाषा से ही तुम लोग शास्त्रीय मर्यादा से प्रतिबन्धित मन्दिरों में उन अछूतों को घुसेडना अपना काम समझते हो जिन को सचमुच न दर्शनों की इच्छा है न श्रद्धा । यदि यह बात नहीं है तो वे श्रद्धा भक्ति युक्त दर्शनाभिलाषी अछूत कहां हैं वे भगवान् के दर्शन के भूखे अछूत कहां हैं जिन के दर्शन देने के लिये आज डङ्के की चोट से भगवान् सडकों पर धीरे धीरे गरुड जी को भी चला रहे हैं। नगाडों के पीछे सह-

नाई आदि सभी बाजे थे जिनकी तुमुलध्वनि विचित्र आनन्द उत्पन्न कर रही थी और मानों भक्तों को कह रही थी कि—

" मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद । "

अर्थात्— भगवान् नारद जी से कहते हैं कि मेरे भक्त जहां गाते हैं मैं वहीं रहता हूं।

बाजों के पीछे शंख चक्र का निशान लिये हुए गजराज चलरहा था। मानों गजराज कहता है कि मुम्बई के निवासियो सावधान! माह से मेरे उद्धार करनेवाले भगवान् आगये, ये शंख और सुदर्शनचक्र भक्तजनों की रक्षा के लिये घूम रहे हैं केवल टेरने की देर है। संसाररूपी माह से मसित मतवारे मनमतङ्ग को समझादो उस की कोई शक्ति चाहे वह साम्पत्तिक हो या पारिवारिक उस की रक्षा नहीं कर सकती, रक्षा करेंगे तो वे ही सुदर्शनचक्रधारी भगवान् श्रीवेङ्कटेश जी। मेरी प्रत्यक्ष साक्षी पर भी यदि तुम भूल करोगे, विश्वास न करोगे तो पीछे पछताने से काम न चलेगा। गजराज के पीछे झण्डे झण्डियों की कतार थी और उस के पीछे मदरासी बाजे श्रीवैष्णव वैण्ड आदि अपनी धुन में लीन थे। श्रीवैष्णव वैण्ड के पीछे आशावल्लभ छड़ी छत्र चामरों से परिवेष्टित श्रीवैष्णवों का विशाल दळ था उस के पीछे विद्वानों और आचार्यों के बीच तारागणों के मध्य पूर्ण चन्द्रमा के समान, हमारे हृदयदेव प्रकटप्रताप श्री १००८ श्री जगद्गुरु महाराज शान्तमूर्ति नङ्गे शिर और नङ्गे पैर मन्द मन्द चल रहे थे। आचार्यचरण के दर्शनों से मुम्बई की जनता मुग्ध हो रही थी। आचार्यचरण मौन थे किन्तु उन की मूर्ति मानो व्यापारमयी मुम्बई सी नगरी को शान्तरस की शिक्षा देती थी। आचार्यचरणों के चारों ओर विद्वानों और आचार्यों के द्वारा प्रबन्ध और स्तोत्रों के पाठ हो रहे थे जिस के श्रवण से मालूम नहीं आज कितने पामर पावन हो रहे हैं। भगवान् श्रीवेङ्कटेश जी गरुड वाहन पर थे किन्तु बहुत ही धीरे धीरे चल रहे थे भक्तों की अभिलाषा,

मुम्बई के भावुकों की श्रद्धा और दर्शकों के मनोरथ पूर्ण करने ही के लिये मानों आज शीघ्रातिशीघ्रगामी गरुड जी भी मन्दगामी हंस की गति की अनुमति कर रहे हैं। स्थान स्थान पर भक्तजन गद्गद हृदय से जय जयकार की ध्वनि से आकाश को गूँजते थे और प्रतिध्वनि से मुम्बई नगरी भगवान् की यात्रा का स्वागत करती थी बीच बीच में भक्तजन पुष्पमाला आदि अर्पण कर मानों कह रहे थे " पत्रं पुष्पं फलं तोयम्" को स्मरण कीजिये। भगवान् के सवारी के साथ श्रीवेङ्कटेश प्रेस की भजनमण्डली थी जो अपने भजनों के प्रभाव से भक्तों को प्रेमसागर में मग्न कर रही थी। यह जुलूस बडे ही ठाटबाट से बडी ही भक्तिभावना पूर्ण जनसमूह के साथ फनसवाडी, कासजी पटेल टेङ्क (सी. पी. टेङ्क) माधवबाग रोड, नलबाजार का चौरास्ता, मोती बाजार, मुम्बादेवी रोड, मारवाडी बाजार, विट्ठलवाडी, कालबादेवी रोड, भूलेश्वरमारकेट, आदिक प्रसिद्ध प्रसिद्ध स्थानों के रास्ते हो पुनः फनसवाडी के दिव्यदेश मन्दिर के द्वार पर जा पहुँचा। अवश्य ही रात को २ बज रहे थे लोग दिन भर से प्रतिष्ठामहोत्सव और जुलूस में लग रहे थे फिर भी किसी के चेहरे पर थकावट की झलक न थी और सभी उच्चस्वर से सम्मिलित जयध्वनि से वारंवार आकाश को प्रतिध्वनित करने के लिये बाध्य कर रहे थे। भगवान् की सवारी जिस समय मन्दिर में पधारने लगी उस समय उपस्थित जनसमुदाय अतृप्त नेत्रों से वारंवार दर्शन कर रहे थे और अन्त में श्रीवेङ्कटेश भगवान् का गीत गाते हुए लोग अपने अपने स्थान को पधारे तथा भगवान् मन्दिर में पधराये गये। आज से प्रतिष्ठा महोत्सव का प्रधान उत्सव समाप्त हुआ और कल से लगभग पाँच दिनों तक ब्रह्मोत्सव होगा और, पाँचो दिन बराबर दिन में और रात में भगवान् भिन्नभिन्न वाहनों पर निकलेंगे और अपने भक्तों के मनोरथ पूर्ण करते हुए दर्शन देंगे।

श्रीः ।

ब्रह्मोत्सव ।

दिव्यदेश मन्दिरों के आवश्यक उत्सवों में "ब्रह्मो-त्सव" को प्रधान स्थान दिया गया है। ब्रह्मो-त्सव का विस्तृत विधान शास्त्रों में भली भांति कहा गया है उस का वर्णन करना यहां पर आवश्यक नहीं किन्तु संक्षेप में हम केवल इतना बतला देना चाहते हैं कि प्रत्येक दिव्यदेश में शक्ति और अवकाश के अनुसार एक दिन से लेकर १० दिनों तक ब्रह्मोत्सव करने का विधान है अवश्य ही जब एक ही दिन का ब्रह्मो-त्सव होता है तब ध्वजारोपण की विधि नहीं की जाती। अन्यान्य उ-त्सवों के समान ब्रह्मोत्सव के समय भी विशेष रूप से तीर्थप्रसाद आदि का प्रबन्ध किया जाता है किन्तु इस उत्सव में एक यह विशेपता होती है कि ब्रह्मोत्सव के प्रत्येक दिन वेदपाठ और प्रबन्धपाठ के साथ भग-वान् की सवारी मन्दिर से बाहर निकाली जाती है। ब्रह्मोत्सव विधि पूर्वक अवश्य होना चाहिये इस के लिये तो नियम है किन्तु कब होना चाहिये इस बात का बन्धन नहीं है फिर भी प्रायः प्रतिष्ठादिन के समय में ही यह उत्सव मनाया जाता है अतएव सुविधा के अनुसार यदि ब्रह्मोत्सव के समय में कोई परिवर्तन करना चाहे तो शास्त्र के नियम बाधक नहीं होंगे। भगवान् श्रीवेङ्कटेश जी की प्रतिष्ठा हो गयी शास्त्र में प्रतिष्ठाङ्गरूप ध्वजारोहणपूर्वक उत्सव करने का विधान है अत एव प्रतिष्ठा के पश्चात् उत्सव करना आवश्यक हुआ सात दिनों तक प्रतिष्ठामहोत्सव होता रहा इस अवसर पर यदि १० दिनों तक ब्रह्मो-त्सव किया जाता तो बाहर से आये हुए लोगों को असुविधा होती

एक समय पर महागोष्ठी ।

अतः प्रतिष्ठाङ्ग रूप यह ब्रह्मोत्सव केवल पाँच दिनों का मनाया गया। ज्येष्ठ शुक्ल ११ शनिवार से आरम्भ कर के ज्येष्ठ शुक्ल १५ बुधवार को ब्रह्मोत्सव समाप्त किया गया। पाँचों दिन बराबर रात और दिन में सवारियाँ निकलती थीं जिन का विस्तारपूर्वक वर्णन करना कठिन है संक्षेप में विवरण इस प्रकार है:—

ज्येष्ठ शुक्ल ११ शनिवार को दिन में ध्वजारोपण विधि करने के पश्चात् ८ बज के ३० मिनट पर दिव्यदेश मन्दिर से भगवान् की सवारी पालकी पर निकली। पालकी खूब ही सजी हुई थी और साथ में जुलूस बहुत ही भव्य था; स्थान स्थान पर लोगों ने पुष्पमालायें चढायीं और आरती की और प्रसाद बॉटा गया । जयध्वनि से आकाश प्रतिध्वनित हो रहा था। जुलूस फनसवाडी से निकल कर ठाकुरद्वार रोड, अगियारी लेन और कबूतरखाना हो कर दिव्य देश मन्दिर को वापस आया। इसी दिन, रात में ९ बजे पुन: हनुमान् वाहन पर भगवान् की सवारी निकली जो फनसवाडी, ठाकुरद्वाररोड, भूलेश्वर, कबूतरखाना, फायरब्रिज, मारवाडी बाजार, विठ्ठलवाडी, कैथेड्रल-स्ट्रीट आदि-स्थानों पर होती हुई दिव्यदेश मन्दिर को वापस आयी। दिन की अपेक्षा रात में जुलूस की शोभा अधिक थी और लोग बडे ही चाव से आते दर्शन करते और अपनेआपको कृतकृत्य मानते थे।

ज्येष्ठ शुक्ल १२ रविवार को दिन में पुन: वही नियत समय पर ८॥ बजे पालकी पर भगवान् की सवारी निकली। सवारी का जुलूस ठाकुरद्वार रोड, भूलेश्वर, कबूतरखाना, कैथेड्रल स्ट्रीट, अगियारी लेन आदि स्थानों पर घूमता हुआ दर्शकों के मनोरथ सिद्ध करता हुआ मन्दिर को वापस आया। मन्दिर में आकर भगवान् की आर्ती की गयी और तीर्थ प्रसाद बॉटागया। इस दिन भी रात्रि में ९ बजे पुनः भगवान् हंसवाहन पर निकले और ठाकुरद्वार रोड, सी०पी०टैङ्क रोड, गुलालवाडी, तॉवाकॉटा, धनजीस्ट्रीट, मोती बाजार, चौकसी बाजार, मारवाडी बाजार, कालबादेवी रोड, क्रोयल स्ट्रीट,

और अगियारी लेन के निवासियों को दर्शनों से कृतार्थ करते हुए दिव्य देश मन्दिर– फनसवाडी को वापस आये। आज के जुलूस में दर्शकों की भीड अधिक थी।

ज्येष्ठ शुक्ल १३ सोमवार को दिन में उसी नियत समय भगवान् की सवारी ८॥ बजे पुनः निकली और आज खत्तरगली, हीराबाग और सी० पी० टैङ्करोड होती हुई दिव्यदेश मन्दिर को वापस आयी। आज के जुलूस में भी खास उत्साह और पर्याप्त भीड थी। नित्य के समान ही फिर आज रात्रि में ९ बजे शेषवाहन पर सवार होकर भगवान् निकले और फनसवाडी से ठाकुरद्वार रोड, मूलेश्वर, कबूतरखाना, काल्बादेवी रोड, प्रिंसेज स्ट्रीट, गिरगांव आदि स्थानों पर होकर दिव्य देश मन्दिर में वापस आये। यद्यपि इन्द्रदेव की कृपा रहती है और नित्य ही भगवान् की सवारी निकलती है तथापि दर्शकों की श्रद्धा और भक्ति में कमी नहीं; वे स्थान स्थान पर इकट्ठे होते, दर्शन करते और अपनेआपको कृतकृत्य मानते तथा अपने अपने भाग्य को सराहते हैं।

ज्येष्ठ शुक्ल १४ भौमवार को प्रातःकाल पुनः उसी नियत समय भगवान् की सवारी ८॥ बजे पालकी पर निकली और खत्तरगली, कान्देवाडी, मारवावाडी, गिरगांव, वैङ्करोड, सी० पी० टैङ्क रोड और ठाकुरद्वाररोड होकर दिव्यदेश मन्दिर को वापस आयी। इसी प्रकार रात में इस दिन भी वही ९ बजे घोडे की सवारी पर भगवान् निकले और फनसवाडी से चलकर, ठाकुरद्वाररोड, कबूतरखाना, मूलेश्वररोड, काल्बादेवी रोड, ताँबाकाँटा, मारवाडी बाजार, कैथेड्रल स्ट्रीट आदि स्थानों को पवित्र करते हुए दिव्यदेश मन्दिर को वापस आये।

ज्येष्ठ शुक्ल १५ बुधवार को ब्रह्मोत्सव का अन्तिम दिन था अतएव आज बडी धूमधाम थी। आज भी नित्य के समान ही ८॥ बजे प्रातःकाल भगवान् पालकी की सवारी पर निकले और हीराबाग, कान्दावाडी, मारवावाडी, गिरगांव, सेण्डर्स्टरोड, चौपाटी, गिरगांवट्र्र-

मिनस,,चरणीरोड, खेतवाडी, वेङ्करोड, खम्भातलेन, खेतवाडी मेन रोड और सीं० पी० टैङ्करोड होते हुए फनसवाडी में दिव्यदेश मन्दिर को वापस आये । स्थान स्थान पर भगवद्भक्तों ने "पत्रं पुष्पं फलं तोयं" के अनुसार पुष्प, माला, आरती आदि से पूजायें कीं और आज ही श्रीवेङ्कटेश्वर प्रेस के सामने रायसाहब श्रीसेठ रङ्गनाथ जी की ओर से भी आर्ती पूजा की गयी । आज लोगों में अतीव उत्साह था । मन्दिर में वापस आने पर भगवान् का अवभृथ स्नान का विधान किया गया । यद्यपि यज्ञान्तस्नान समुद्र में करने का निश्चय हुआ था किन्तु वर्षा होती रहने के कारण यज्ञान्तस्नान मन्दिर में ही हुआ । नित्य के समान ही आज भी ९ बजे रात को मङ्गलगिरि पर भगवान की सवारी निकली और फनसवाडी से ठाकुरद्वाररोड, गुलालवाडी, ताँबाकाँटा, जूनी हनुमानगली, कालवादेवी रोड, भूलेश्वर, कुँभारटुकडा होती हुई दिव्य देश मन्दिर को वापस आयी । आज भी जुलूस में खासी भीड और अपूर्व उत्साह था । भगवान की सवारी लौट आने पर रात को पुष्पयाग हुआ, पूर्णाहुति हुई और अन्त में ध्वजावरोहण हुआ । इस प्रकार पाँच दिनों तक बडे समारोह के साथ ब्रह्मोत्सव मनाया गया और सकुशल सब कार्य सम्पूर्ण हुआ ।

इस वर्ष का ब्रह्मोत्सव समाप्त होगया किन्तु अनुभव से यह विदित हुआ कि यहां जून के महीने में वर्षा होने लग जाती है और वर्षा के समय इस प्रकार के बडे उत्सव के करने में जिस में नित्य ही भगवान की सवारी का जुलूस निकलता है कठिनाई होगी अतएव प्रत्येक वर्ष ब्रह्मोत्सव कब हुआ करेगा इस का निर्णय अभी से करलेना चाहिये और वह समय स्थानीय सुविधा और शास्त्र की मर्यादा के अनुसार होना चाहिये । अवश्य ही भगवान की कृपा से जिस प्रकार प्रतिष्ठामहोत्सव निर्विघ्न सम्पन्न हुआ उसी प्रकार उस का प्रधान अङ्ग ब्रह्मोत्सव भी आज सम्पूर्ण होगया इस के लिये हम उस के सभी प्रबन्धकर्ताओं और भगवद्भक्तों को बधाई देते हैं। शुभम्।

श्रीवेंकटेश भगवान की जन्मपत्री ।

सेवकों का उत्तम— भविष्य ।

(लेखक श्रीयुत प० इन्द्रनारायण द्विवेदी— शुद्धिपुरी ।)

विक्रम संवत् १९८४ शकाद्ब १८४९ के ज्येष्ठ शुक्ल १० शुक्रवार को रेल्वे समय के अनुसार मध्याह्नोत्तर १ बजे मोहमयी नगरी में दिव्यदेश भवन में श्रीविङ्कटेश भगवान् की प्रतिष्ठा हुई, अतएव वही समय भगवान के अर्चावतार का माना गया, उस समय प्रभव संवत्सर उत्तरायण, उत्तरगोल, ग्रीष्मऋतु, ज्येष्ठमास, शुक्लपक्ष, एकादशी तिथि, चित्रानक्षत्र, वरीयान् योग और वणिज करण था, मुसल्योग अभिजिन्मुहूर्त और सिंह लग्न थी। चित्रा नक्षत्र का दूसरा चरण था। अतएव कन्या राशि, वैश्य वर्ण, नरवश्य व्याघ्रयोनि, राशीश बुध, राक्षसगण, मध्यनाडी और मृगवर्ग होता है। जिनका संक्षेप फल आगे लिखा जायगा।

अवतार लग्न कुण्डली ।

टि०— जिन ग्रहों के नीचे × चिह्न दिया गया है वे वक्री हैं शेष सब मार्गी हैं

संवत्सर का फल बहुत ही उत्तम है क्योंकि ब्रह्मबीसी का यह पहला वर्ष है अतएव दिनोंदिन वृद्धि और सुखशांति होने का योग है। अयन और गोल के फल भी सात्विकभाव को फैलाने वाले और उत्तम हैं। ऋतुफल भी अच्छा है भगवान के प्रचण्ड प्रताप से देश का अधर्मान्धकार नष्ट होगा और भगवद्भक्ति की ज्योति बढेगी। मास का फल भी उत्तम है विशेषकर ब्राह्मणों के लिये। एकादशी का नाम नन्दा है अतएव तिथि का फल भी आनन्ददायक है। शुक्रवार का फल तो प्रत्यक्ष ही है। दिव्यदेश और उसके सहायकों, सेवकों की लक्ष्मी अचल होकर विराजेगी। चित्रा देव नक्षत्र है और मध्यगामी है अतएव नक्षत्र का फल भी उत्तम है, अवश्य ही भगवान् की विचित्र लीलाएँ कभी २ भक्तों को चित्रित कर देनेवाली हुआ करेंगी। वरीयान योग का फल बहुत ही पुष्ट है। करण के फल की क्या प्रशंसा की जाय, भगवान् को व्यापार से और व्यापारियों से ही अधिक लाभ होगा और समृद्धि बढेगी। मुसलयोग का फल साधारण है किन्तु मुहूर्त का फल अत्युत्तम राजयोग कारक है। विजय—श्रीभगवान की अनुगामिनी होगी और धर्मराज्य की वृद्धि होगी, सिंहलग्न के फल से सारा शत्रुसमाज मृगगण के समान पलायमान होगा। कन्याराशि में चन्द्र हैं अतएव भगवान् की प्रकृति दयालु और मनोहर होगी। वैश्यों के लिये वि—शेष किन्तु मनुष्य मात्र के लिये शान्तिप्रद होगी और दुष्टों के लिये संहार करनेवाली। राशीशादिकों का फल भी साधारणतः उत्तम है।

लग्नेश सूर्य राज्यभाव में है अतएव भगवान् और उनके सेवकों तथा आश्रितों की राज्य लक्ष्मी बढेगी और विशेष उन्नति होगी। धनेश बुध लाभ भाव में अपने घर का होकर उच्चस्थ राहु के साथ बैठा है और व्ययेश धनभाव में चन्द्रमा है जिसको अष्टमेश देखता है अतएव धन—लाभ दिनों दिन बढेगा यहांतक कि इतर—जातियों की सेवा का

भी योग है किन्तु धन– सञ्चय का योग नहीं है। भूमि गृह आदि कार्यों में अत्यधिक व्यय की सम्भावना बढती है। हां बृहस्पति संधि समीपी है अतएव अपव्यय का अधिक योग नहीं है। तृतीय भाव का फल साधारण है क्योंकि उस का स्वामी शुक्र अति निर्बल है। चतुर्थ भाव का स्वामी भौम नीच का होकर व्यय भाव में है, संधि समीपी होने से उस का फल शून्य– प्राय है और चतुर्थ भाव में वक्री होने से शनि उच्चाभिलाषी होगया है। शनि, शत्रु और सप्तम का स्वामी है। एक आचार्य का वचन है कि—

" लग्नात्परतरो जीवो लग्नात्परतरः शनिः।
स्थानहानिकरो जीवः स्थानवृद्धिकरः शनिः॥ "

अर्थात्— लग्न के बाहर यदि बृहस्पति और शनि हों तो बृहस्पति स्थान हानि करें और शनि स्थान वृद्धि करे। अतएव भगवान् और उन के आश्रित सेवकों की भूमि, गृह और वाहन की वृद्धि होगी और सुखसम्पदा बढेगी किन्तु आत्मीय शत्रुओं की उत्पत्ति होगी और अधिक दिनों तक न ठहर कर वे शान्त होते रहेंगे। पञ्चमेश अष्टम भाव में हैं और पांचवें भाव में केतु है अतएव परस्पर मनोमालिन्य और उत्तरदायी सेवकों के चित्त में चिन्ता उत्पन्न होने का भी योग है किन्तु केतु और अष्टमेश दोनों ही अति निर्बल हैं और शुभ ग्रह देखते हैं। अतएव नीचों द्वारा उठाये गये उत्पात शीघ्र ही उच्च–हृदय के सेवकों द्वारा शान्त हो जायँगे। शत्रु–भाव का फल अच्छा न होने पर भी हानिकारी नहीं है। सप्तम भाव का स्वामी सुखवर्ती है अतएव भगवान् और उनके सेवकों को सर्वतो भाव से गृह वाहन भूमि सुख बढने के योग हैं। भगवान् के भक्त और आश्रित दृढ और चिरायु होंगे यही अष्टम भाव का फल है। भाग्येश भौम नीच का होकर व्यय में है अतएव धार्मिक विवाद और इतर सेवा की कल्पना का

योग है । राज्य और लाभ भाव के फल उत्तमोत्तम है । व्यय का फल अच्छा नहीं है क्यों कि समय-समय पर अपव्यय का फल आता है। सारांश यह कि श्रीवेङ्कटेश भगवान् के ऐश्वर्य. गृह वाहनादि की वृद्धि होगी, सेवकों आश्रितों की श्रद्धा भक्ति और धनधान्य और सन्तान की बढती होगी,' विरोधी शत्रु उत्पन्न होंगे किन्तु स्वत. शान्त हो जायँगे, व्ययाधिक्य होगा सो भी भूमि, गृहादि के सम्बन्ध में, अतएव फल उत्तम है ।

कुछ ज्योतिषियों ने भ्रम से कन्यालग्न माना है और तुला के चन्द्रमा रखे है किन्तु वह वास्तविक नहीं है और उन के भ्रम के कारणों का दिग्दर्शन कराना भी यहां व्यर्थ है । फल उत्तम ही हैं । शुभम् ।

प्रार्थनापञ्चक ।

(लेखक—श्रीवेङ्कटेश भगवान का एकभक्त ।)

(१)

श्रीवेंकटेश प्रभो दयामय शरण मुझ को दीजिये ।
अशरण- शरण निजनाम फिर चरितार्थ जग में कीजिये ॥
विषयविष सों व्यथित चञ्चल चित्त को अपनाइये ।
सदाचारी शीलधारी दासदास बनाइये ॥

(२)

जाति धर्म स्वदेश का व्रत नित्यनित दूना बढै ।
अनाचार विचार दूषित वायु तन मन से कढै ॥
देव ऋषि अरु पितर ऋण से उरिण हम होवें अभी ।
अरु न निज आचार्यचरणों से विमुख होवें कभी ॥

(३)

न्याय समुपार्जित धनों से गेह मम पूरे रहें ।
लोभ मोहादिक अरिन सों सर्वदा दूरे रहें ॥
सदाचारी सन्ततिन सों सदन भरपूरे रहें ।
जो सदा सत्कर्म हित रङ्गभूमि में शूरे रहें ॥

(४)

हों सभी सन्तान वैदिकधर्म अनुयायी बली ।
वेङ्कटाचलनाथ के चरणोदकों से हो पली ॥
हृदय से भगवज्जनों की दासता स्वीकार हो ।
दूसरी सब दासता की आश पै धिक्कार हो ॥

(५)

माँगने में मङ्गनों का मन नहीं थकता कभी ।
दानियों का दान त्यों रुकता नहीं जानें सभी ॥
नाथ समदानी धनी अरुनाथ जब मङ्गन बने ।
धर्म धन सन्तान सों पूरो भवन अङ्गन बने ॥

दिव्य देश-विवेचन ।

अर्चावतार ।

पर ब्रह्म परमेश्वर भगवान लक्ष्मीनारायण के असंख्य अवतारों के मुख्य पाँच भेद माने गये हैं । प्रथम " पर ", दूसरा " व्यूह ", तीसरा " विभव ", चौथा " अन्तर्यामी ", और पाँचवाँ " अर्चा " अवतार कहलाता है । प्रथमभेद के परस्वरूप भगवान् वासुदेव श्रीवैकुण्ठ धाम में विराजते हैं। दूसरे भेद के व्यूहस्वरूप

श्री वेंकटेश भगवान। (मूलमूर्ति)

भगवान् व्यूहलोकों में विराजमान है । तीसरे भेद के अवतार भगवान् मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र, भगवान् कर्मयोगी श्रीकृष्णचन्द्र आदि विभवस्वरूप से अबतक जो हुए हैं वे अतिप्राचीन काल में हुए है वह पवित्र समय आजकल के प्राणियों के लिये दुर्लभ है। चौथे भेद के अवतार "अन्तर्यामी" नाम से प्रसिद्ध हैं। अन्तर्यामी स्वरूप भगवान् प्रत्येक मनुष्य के अन्त:करण में है फिर भी पुण्यात्मा और योगनिष्ठ महात्माओं के अतिरिक्त सर्वसाधारण मनुष्य उन के दर्शन करने की शक्ति नहीं रखते क्योंकि तपोबल और योगबल से ही अन्तर्यामी भगवान के दर्शन हो सकते है। पाँचवें भेद के अवतार जो अर्चानाम से प्रसिद्ध हैं उन का दर्शन, उन की आराधना और उन की सब प्रकार की भक्ति करने की सुविधा मनुष्य मात्र को है, मनुष्य मात्र उन की आराधना से अपने मनोरथ की सिद्धि कर सकते हैं। आज दिन यही एक ऐसा अवतार है कि जिस की आराधना, भक्ति और दर्शन करने की सुविधा भगवान ने भाग्यवान् भगवज्जनों को दी है। इस अवतार को प्रत्येक भगवद्भक्त अपने घर में यथेष्ट आकार प्रकार से रख कर अर्चन, ध्यान और दर्शन कर सकते है। शरणागति में निष्ठा रखनेवाले भगवज्जनों के लिये इस कलिकाल में अर्चावतार के अतिरिक्त दूसरी कोई सरल गति नहीं है अतएव शरणागति को प्रधानता देनेवाले श्रीवैष्णव सम्प्रदायावलम्बी भगवज्जन भगवान् के "अर्चावतार" की अर्चा, ध्यान और दर्शन आदि में अधिक व्यामोह, श्रद्धा, अनुराग और विश्वास रखते है।

यद्यपि शास्त्रानुसार भगवन्मूर्त्तियों को स्थापित कर प्रत्येक भगवद्भक्त अपने घर में अर्चावतार की आराधना कर सकता है, प्रत्येक ग्राम और नगर के लोग अपने अपने ग्रामों नगरों और अपने ग्राम एवं नगर के प्रत्येक भाग में देवस्थानों की रचना कर उन में अर्चावतार भगवान् की प्रतिष्ठा कर सकते हैं करते हैं और करना चाहिये

तथापि यह काम अधिक सरल नहीं है । क्योंकि जिस प्रकार अर्चावतार से आज मनुष्य मात्र अपने मनोरथ के प्राप्त करने में समर्थ हैं और अर्चावतार भगवान को स्वतन्त्रता पूर्वक इच्छानुसार अपने घर, ग्राम, नगर और ग्रामादि के कोने कोने में स्थापित करने के अधिकारी हैं उसी प्रकार अर्चावतार के भगवान् की स्थापना में कठिनाई भी है। यों तो कहीं भी भगवन्मूर्तियों को मनमानी रीति से रख कर देवस्थान की भावना रखना दूसरी बात है किन्तु जिस अर्चावतार की चर्चा की जा रही है उस की स्थापना, उस का स्थाननिर्माण और उस की प्रतिमा का आविर्भाव सर्वसाधारण के लिये अधिक सरल नहीं है । जबतक वैदिकरीति से आरम्भ से ही स्थानों, मूर्तियों और उन के उपकरणों का निर्माण नहीं होता और जबतक वैदिकविधि से यथोचित प्रतिष्ठा नहीं की जाती तबतक किसी भी भगवन्मूर्ति में चाहे वह धातुविग्रह हो, काष्ठविग्रह हो और चाहे पाषाणविग्रह हो, उस परब्रह्म परमात्मा की ज्योति प्रकाशित नहीं होती । जिस प्रकार अरणि (काष्ठ) में विद्यमान रहने पर भी जबतक उस का मथन नहीं किया जाता अग्नि प्रज्वलित नहीं होती, जिस प्रकार प्रत्येक प्राणी के अन्तःकरण में वह परब्रह्म परमात्मा अन्तर्यामी रूप से विद्यमान रहता है किन्तु, तपस्वी योगियों के अतिरिक्त सर्वसाधारण मनुष्य को प्रत्यक्ष नहीं होता उसी प्रकार सर्वव्यापी के रूप में प्रत्येक वस्तु में विद्यमान रहने पर भी उस समय तक उन मूर्तियों में अर्चावतार भगवान् का दर्शन नहीं हो सकता और न उन मूर्तियों की अर्चा, ध्यान एवं दर्शनों से मनुष्य अपने अभीष्ट को प्राप्त कर सकते है जबतक वेदों के ज्ञाता विद्वान् आचार्य विधिविहित रीति से बने हुए मन्दिर में शास्त्रानुसार उन मूर्तियों में भगवान् को आवाहित कर के यथोचित प्रतिष्ठा नहीं करते । अतएव किसी स्थान को किसी देवमूर्ति की स्थितिमात्र से अर्चावतार अथवा देवस्थान कहना उचित नहीं । उन

स्थानों में और मूर्तियों के व्यापारी दूकानदारों की दूकानों में कोई विशेष अन्तर नहीं होता । सारांश यह कि भगवान् के अर्चावतार उन्ही स्थानों में माने जाते है जिन स्थानों की रचना, उन स्थानों की मूर्तियों का निर्माण और उन की प्रतिष्ठा वैदिकरीति से हुई हो और शास्त्रानुसार जिन स्थानों में अर्चा और उत्सवादि सदा होते हों ।

देवस्थान और दिव्यदेश ।

साधारण दृष्टि से " दिव्यदेश " का शब्दार्थ देवस्थान ही माना जाता है। दिव्य का अर्थ देव का और देश का अर्थ स्थान मानने से दिव्यदेश का अर्थ देवस्थान होता है। किन्तु साधारण देवस्थानों और दिव्यदेश नामक देवस्थानों में बहुत बडा अन्तर है। दिव्यदेश शब्द प्राचीन काल से मुख्य मुख्य विशेष तीर्थस्थानों और देवस्थानों के लिये योगरूढशब्द मान लिया गया है अतएव सभी देवस्थानों के लिये दिव्यदेश शब्द का प्रयोग न किया जाता है और न करना चाहिये । इस में कोई सन्देह नहीं कि जिन स्थानों में विधिविहित स्थान एवं मूर्ति की रचना हुई हो और शास्त्रानुसार उन की प्रतिष्ठा की गयी हो तो उन स्थानों को आप देवस्थान कह सकते है और वहां पर अर्चावतार भगवान् की आराधना करना उचित है, उन स्थानों में भी अर्चावतार भगवान् की आराधना की जा सकती है जो प्राचीन काल से पुराणादिप्रतिपादित देवस्थान हैं । इन देवस्थानों और दिव्यदेश नामक देवस्थानों में बहुत बडा अन्तर क्या है अब हम इसी विषय को दिखलावेंगे । यों तो सभी देवस्थानों में अपने इष्ट देव की आराधना करने में देवता का अक्षुण्ण भाव से सन्निधान मानना ठीक है किन्तु दिव्यदेशों के लिये शास्त्रों में अधिक महत्त्व दिया गया है।

भारत वर्ष की पवित्र भूमि में प्राचीन काल में १०८ दिव्यदेशों की चर्चा है जिन का विवरण हम आगे देंगे किन्तु यहां सब से पहले दिव्यदेशों के प्रकारों, उन की कल्पना आदि का संक्षेप वर्णन करना अनुचित न होगा। एक दिव्यदेश की कल्पना करना एक जगत की कल्पना करने के समान है। जिस प्रकार अन्तर्यामी भगवान् की अर्चा, ध्यान और दर्शनों के लिये योगियों को अपने शरीर के भीतर ही पञ्चभूतों के स्थान एवं चतुर्दश भुवनों की कल्पना करनी पड़ती है उसी प्रकार अर्चावतार भगवान् की आराधना, ध्यान और दर्शनों के लिये मन्दिर की कल्पना में उस के भीतर ब्रह्माण्ड और उस के बाहर के वैकुण्ठलोक की कल्पना करनी पड़ती है। देवदेश रचनारम्भ के प्रथम से ही अनेक शास्त्रीय विधि का पालन करना होता है। मन्दिर की रचना आरम्भ होने से पूर्व ही निर्विघ्न कार्यसिद्धि के निमित्त एक मन्दिर बना कर उस में भगवन्मूर्ति की स्थापना की जाती है और उसी समय से उस मन्दिर में पूजा आराधना होने लगती है। दिव्यदेश में जिस स्थान पर– गर्भमन्दिर में भगवन्मूर्ति की स्थापना की जाती है उस स्थान को वैकुण्ठलोक कहते हैं अतएव भगवान् के उक्त स्थान के नीचे क्रमशः एक के ऊपर दूसरे आधारशक्ति, महाकूर्म, आदिशेष, पृथ्वी देवी आदि की स्थापना की जाती है।

निर्माणक्रम वर्णन।

दिव्यदेश मन्दिर के निर्माण के समय आरम्भ में प्रवेशबलि, फिर वास्तुहवन कर के तब कर्षण आदि कर्म किये जाते हैं। कर्षणादि कर्मों के पश्चात् जल निकलने तक भूमि को खोदकर तब भूगर्भन्यास किया जाता है। उसके पश्चात् क्रम से प्रथमेष्टिकास्थापन, प्रासाद गर्भन्यास, अधिष्ठान कल्पना, मूर्धेष्टिका विधान, कलशस्थापन आदि-

कर्म शास्त्रानुसार करने चाहिये । देवस्थानों के निर्माण में केवल धन व्यय करने की आवश्यकता नहीं होती वल्कि शास्त्रानुसार देवस्थान के निर्माण की सामग्री और उन के यथाक्रम उपयोग करने में बड़े विचार की आवश्यकता पड़ती है । क्योंकि शास्त्रों में सामग्री और विधि अविधि क्रियाओं के अनुरूप ही मन्दिर वनवानेवाले को उस का फल भी मिलता है । शास्त्रानुसार कर्म से शुभ और शास्त्रविरुद्ध कर्म से अशुभ फल प्राप्त होता है । यह बात तो दूसरी है कि जिस प्रकार आजकल ब्राह्मणादि द्विजातियों के यहां भी गर्भाधानादि संस्कारों को न कर के केवल उपनयन संस्कार से ही सन्तुष्ट हो ब्राह्मण आदिवर्ण कहलाते और ब्राह्मण आदि के कर्म करते हैं उसी प्रकार लोग मनमानी रीति से अनेक देवस्थानों की रचना कर के केवल प्रतिष्ठा के समय शास्त्रानुसार विधि करते हैं और ऐसे देवस्थान भी देवस्थान ही माने जाते हैं। उन के रचयिता को यातो शास्त्र की मर्यादा का ज्ञान नहीं होता या उनको ऐसा अवसर ही नहीं प्राप्त होता कि वे आरम्भ से शास्त्रविधि का पालन कर सकें अतएव ये सब क्रियायें लुप्त होती जा रही हैं। मन्दिरनिर्माण में पदार्थों के अनुसार फल लिखा है । केवल ईंट, केवल पत्थर, केवल काष्ठ अथवा मिश्रित पदार्थों से मन्दिर वन सकते हैं । मन्दिरों में जो शिलायें लगायी जाती है उनके तीन भेद हैं और स्थान विशेष से ही उनके उपयोग का विधान है । जैसे स्त्रीशिला पुरुषशिला और नपुंसकशिला । इन शिलाओं की पहिचान शास्त्रों में वर्णित है और उस के ज्ञाता भली भाँति पहिचानते हैं ।

दिव्यदेशों के अङ्ग–भाग ।

मन्दिर के दो मुख्य भाग होते हैं पहला प्रासाद दूसरा विमान। पृथ्वी से लेकर प्रथम छत पर्यन्त भाग को प्रासाद कहते हैं और उसके ऊपर के भाग का नाम विमान है। मन्दिर में पृथ्वी से लेकर शिखर पर्यन्त १८ अङ्ग होते है । मन्दिरों का निर्माण एकतल, द्वितल आदि_

ग्यारह तल तक का होता है और तल के अनुसार ही उनके अङ्गों का भी क्रम होता है । एकतल मन्दिर की रचना में सब से नीचे उपपीठ उसके ऊपर क्रमशः *अधिष्ठान*, उपानह, पाद, प्रस्तर, *ग्रीवा और शिखर* होते हैं । इसी प्रकार दो तल के मन्दिर की रचना में क्रम से एक के ऊपर दूसरे उपपीठ, अधिष्ठान, चरण, प्रस्तर, कूट, शाला, संस्थान पञ्जर, प्रस्तर,वेदि, ग्रीवा और शिखर का निर्माण किया जाता है । इसी प्रकार तीन चार और पांच आदि ग्यारहों तलों के मन्दिरों के अङ्गों का भिन्नभिन्न प्रकार से वर्णन है । इन उपर्युक्त अङ्गों के निर्माण में शिलाओं के उपयोग की व्यवस्था की गयी है । मन्दिर में उपानह के नीचे के सभी भाग स्त्रीशिला से बनाये जाते हैं, उपानह के ऊपर शिखर पर्यन्त सभी भाग पुरुषशिलाओं से बनाये जाते हैं और मूर्धेष्टिका की रचना नपुंसकशिला से की जाती है । मन्दिरों में विमानों *की रचना में भी बडी विवेचना की आवश्यकता होती है* । वैजयन्त पुष्पक, सुदर्शन, स्वस्तिक, आदि नाम के १०८ विमानों के अवान्तर भेद हैं जिन में मुख्य विमान तीन ही हैं पहला नागर, दूसरा द्रविड, तीसरा वेसर । उक्त विमानों में परिवारदेवताओं की रचनायें भी की जाती हैं मन्दिर के अङ्गस्वरूप पाकशाला, यज्ञशाला तथा भाण्डार आदि स्थानों की रचनायें भी शास्त्रानुसार यथादिशाओं और यथा—नुरूप से की जानी चाहिये । मन्दिरों में चारों ओर वीधिकायें और प्राकार बनाने की भी आज्ञा है । अवकाशानुसार वीधिकाओं और प्राकारों की सङ्ख्या एक से लेकर सात पर्यन्त होती है । मन्दिरों में परिवारदेवताओं की स्थापना उनकी वीधिकाओं की सङ्ख्या के *अनुसार ही की जाती है । भिन्नभिन्न सङ्ख्या वाले मन्दिरों में परिवार* देवताओं की सङ्ख्याओं और उनकी स्थापना में भी भिन्नता रखी गयी है जिनका सविस्तार वर्णन शास्त्रों में किया गया है ।

दिव्यदेशों के विभेद ।

जिन देवस्थानों का निर्माण दिव्यदेश की रीति से शास्त्रानुसार किया जाय और जिन स्थानों में योग्य आचार्य द्वारा विधिविहित भग-न्मूर्तियों की प्रतिष्ठा की जाय तथा पाञ्चरात्रपद्धति अथवा वैखानस पद्धति के अनुसार पाञ्चकालिक आराधना का प्रबन्ध हो और जिस मन्दिर में नित्योत्सव, वारोत्सव, पक्षोत्सव, मासोत्सव, नक्षत्रोत्सव, अयनोत्सव तथा संवत्सरोत्सव का अनिवार्य रूप से तथा अन्यान्य उत्सवों का प्रबन्ध हो अथवा जो क्षेत्ररूप से अथवा स्थानरूप से शास्त्रप्रतिपादित दिव्यदेश हैं उन स्थानों को ही शास्त्र में दिव्यदेश कहा गया है और उन्ही स्थानों में देवताओं का अक्षुण्ण भाव से विशेष सन्निधान रहता है । उक्तप्रकार के दिव्यदेशों के भी अनेक भेद है। जिन में से मुख्य दो भेद है एक को कहते है "सिद्ध दिव्यदेश" और दूसरे को कहते है "असिद्ध दिव्यदेश"। जो स्थान देवताओं द्वारा स्थापित हुए हैं और पर्वतशिखर, समुद्र के तट पर, नदियों के सङ्गम पर तथा विभवावतार भगवान् की लीलाभूमियों पर हैं उन स्थानों को "सिद्धस्थान दिव्यदेश" कहते है और मनुष्य द्वारा निर्मित और प्रतिष्ठित देवस्थानों को जो दिव्यदेश की विधि से ही निर्मित और प्रतिष्ठित हुए हों चाहे कहीं भी हों "असिद्ध स्थान दिव्यदेश" के नाम से व्यवहार किये जाते हैं। इन दिव्यदेशों में भी दो भेद और है। एक को "प्रधान देवस्थान" कहते है और दूसरे को "अप्रधान देवस्थान" कहते हैं । यदि किसी देवस्थान की रचना के पश्चात् वहा ग्राम या नगर बसाया जाता है तो वह "प्रधान देवस्थान" कहलाता है और यदि ग्राम या नगर बस जाने के पश्चात् देवस्थान की रचना होती है तो उस देवस्थान को "अप्रधान देवस्थान" कहते है । "अप्रधान देवस्थान में भी दो भेद हैं एक को "अङ्ग देवस्थान" कहते हैं और दूसरे को "स्वतन्त्र

देवस्थान " कहते हैं । यदि किसी ग्राम या नगर के अङ्गस्वरूप देवस्थान की रचना की गयी हो तो उस देवस्थान को " अङ्गदेवस्थान" कहते है और यदि किसी देवस्थान की रचना स्वतन्त्ररूप से हुई हो तो उस को " स्वतन्त्र देवस्थान " कहते हैं । इसी प्रकार देवस्थानों के " सञ्चित " " असञ्चित " और उपसञ्चित नाम से तीन वर्ग और हैं जिन का शास्त्रों में सविस्तार वर्णन है।

ऊपर के विवरण को पढकर पाठकगणों के हृदयों में साधारण देवस्थानों और दिव्यदेश नामक देवस्थानों के अन्तर का ज्ञान होगया होगा अतएव इस विषय की पुनरुक्ति करने की कोई आवश्यकता नहीं प्रतीत होती । हां अन्य विशेषताओं के साथ ही यह बतलादेना अनुचित न होगा कि साधारण देवस्थानों के समान, दिव्यदेशों में स्पर्शदोष और दृष्टिदोष नहीं माना जाता । दिव्यदेशों में स्पर्शदोष और दृष्टिदोष का अभाव रहता है । दूसरी बात यह कि साधारण देवस्थान केवल देवस्थान ही माना जाता है और दिव्यदेशदेवस्थानों को आचार्यचरणों ने तीर्थस्थान के रूप में माना है अतएव दिव्यदेश की रचना एक तीर्थस्थान की स्थापना के समान है । उक्तप्रकार के दिव्यदेश प्राचीनकाल में बनाये गये या प्रसिद्ध हुए हैं जिन का माहात्म्य पुराणों में भली भाँति वर्णित है किन्तु आज कल यदि कोई नवीन दिव्यदेश की कल्पना करते हैं तो उनको प्राचीन दिव्यदेशों के साथ कुछ सम्बन्ध करना पडता है बिना ऐसे सम्बन्ध के किसी नवीन दिव्यदेश की कल्पना नहीं हो सकती । अतएव अब अधिक स्पष्ट हो जाता है कि साधारण देवस्थान और दिव्यदेश नामक देवस्थान में कितना बडा अन्तर है ।

प्राचीन १०८ दिव्यदेश ।

श्रीवैष्णव सम्प्रदायावलम्बियों के सर्वस्व प्रधान तीर्थस्थान और दिव्यदेश के नाम से प्रसिद्ध प्राचीन स्थान १०८ हैं ।
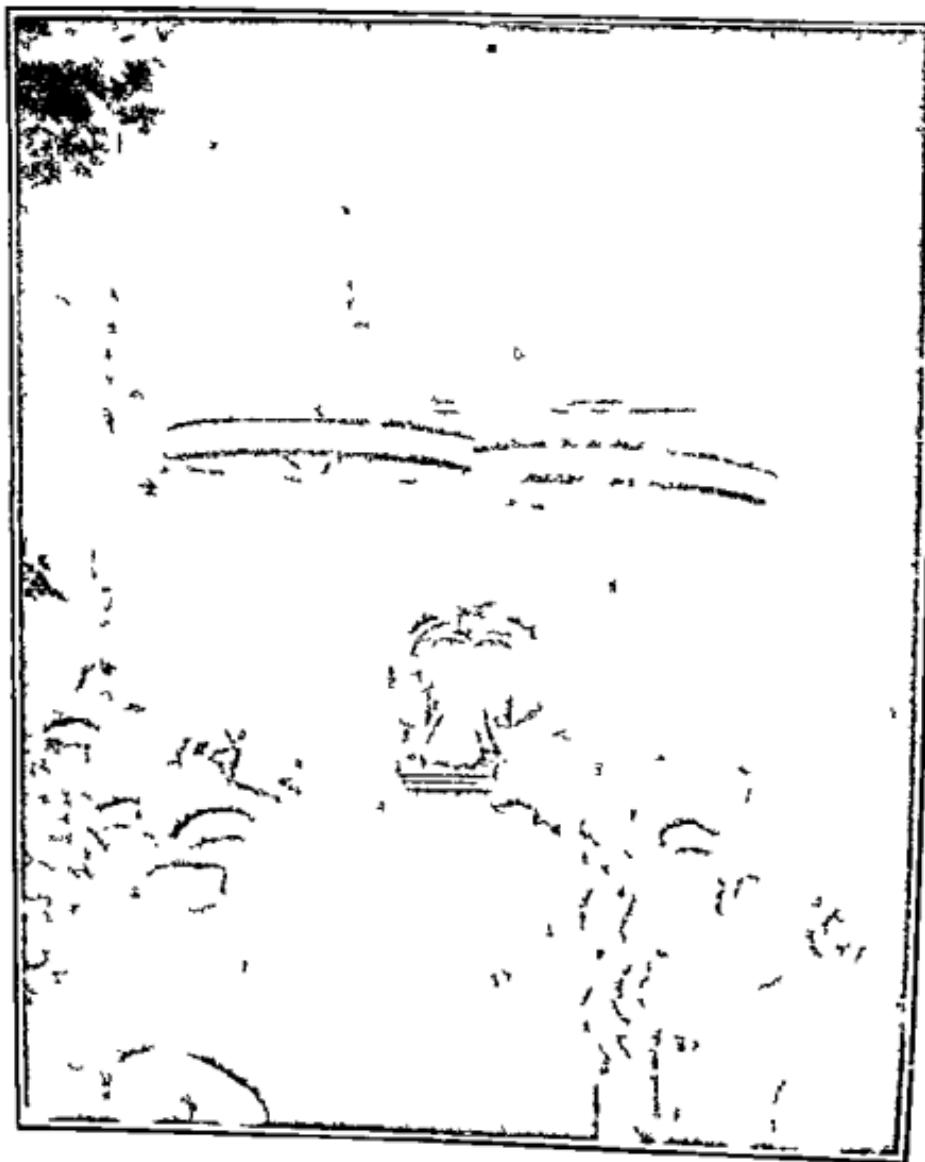
श्री यथोक्तकारी भगवान का यज्ञशाला

उनका विभाग इस प्रकार किया जाता है — १श्रीवैकुण्ठ, १ क्षीराब्धि, ४० चोलदेशीय दिव्यदेश, १८ पाण्ड्यदेशीय दिव्यदेश, १३ पार्वत्य-देशीय दिव्यदेश, २ मध्यदेशीय दिव्यदेश, २२ तुण्डीरमण्डल के दिव्यदेश, ११ उत्तरदेशीय दिव्यदेश और सब का योग १०८ दिव्य-देशों की सङ्ख्या होती है। श्रीवैकुण्ठ दिव्यदेश तो ऊर्ध्वलोक में और क्षीराब्धि दिव्यदेश क्षीरसागर में है शेष १०६ दिव्यदेशों का स्थान-निर्देश इस प्रकार किया गया है —

चोलदेश के ४० दिव्यदेश

(१) श्रीरङ्गम्, (२) उरैयूर–निचुलापुरी, (३) तञ्जावूर–तञ्जा-पुरी–ताञ्जोर, (४) अन्बिल, (५) करम्बनूर–उत्तमर–कोयिल, (६) तिरुवल्लै, (७) पुल्लम्बूदङ्कुडि, (८) तिरुप्पेरनगर, (९) आदनूर (१०) तेरलुन्दूर, (११) शिरुपुलियूर, (१२) तिरुचेरै–सारक्षेत्र, (१३) तलैचङ्ग–नाण्मदियम्–तलैचङ्गाडु, (१४) तिरुक्कुडन्दै–कुम्भ-घोणम्, (१५) तिरुकण्डियूर, (१६) तिरुविण्णहर–उप्पिलियप्पन्, (१७) तिरुकण्णपुरम्, (१८) तिरुवालि, (१९) तिरुनागै–नागप्पट्टण, नेगापटम्, (२०) तिरुनरैयूर–नाचियारकोयिल, (२१) नन्दिपुरविण्ण-हरम्– नादनकोयिल, (२२) तिरुविन्दलूर, (२३) चित्र-कूट–चिदम्बरम्, (२४) कालिच्चीरामविण्णहरम्– शियालि, (२५)कूड लूर–आडुतुरै, (२६) तिरुकण्णङ्कुडि, (२७) तिरुकण्णमङ्गै, (२८) कपि-स्थलम्, (२९) तिरुवेलियङ्कुडि, (३०) तिरुनांगूर में— मणिमाड-कोयिल, (३१) वैकुन्दविण्णहरम्, (३२) अरिमेयविण्णहरम्, (३३) तिरुत्तेवनार् तोहै, (३४) वण्पुरुषोत्तमम् (३५) शेम्बोन् शेय-कोयिल (३६) तिरुत्तेवियम्बलम्, (३७) तिरुमणिक्कूडम्, (३८) तिरु कावलम्बाडि, (३९) तिरुवेळ्ळक्कुलम् (४०) पार्त्तनूपळ्ळि।

पाण्ड्यदेश के १८ दिव्यदेश

(१)तिरुमालिरुम्शोलै, (२)तिरुक्कोट्टियूर–गोष्ठीपुर, (३)तिरुमेय्यम् (४) तिरुप्पुल्लाणि–दर्भशयनम्, (५) तिरुत्तङ्गाल, (६) तिरुमोहूर,

(७) तिरुक्कूडल—मदुरा , (८) श्रीविल्लिपुत्तूर्, (९) तिरुक्कुरुङ्गूर—आल्वार् तिरुनगरि , (१०) तोलैविल्लिमङ्गलम्, (११) शिरीवरमङ्गै—तोताद्रि , (१२) तिरुप्पुलिङ्गुडि , (१३) तिरुप्पेरै (१४) श्रीवैकुण्ठम्, (१५)वरगुणमङ्गै (१६) तिरुक्कुलन्दै—पेरुङ्कुलम्, (१७) तिरुक्कोलूर्, (१८) तिरुक्कुरुङ्गुडि ।

मलावारदेश के १३ दिव्यदेश

(१) तिरुवनन्तपुरम्, (२) तिरुवण्परिशारम्—तिरुप्पदिशारम्, (३) तिरुकाट्करै, (४) तिरुमूलिक्कलम्, (५) तिरुप्पुलियूर्—पुलियूर्, (६) तिरुचेङ्गुन्नूर—शेङ्गुन्नूर, (७) तिरुनावाय्, (८)तिरुवल्लवाल्—तिरुवल्लाय्, (९)तिरुवण्वण्डूर् —तिरुमुदाङ्कर, (१०) तिरुवाट्टारु (११)वित्तुवक्कोडु, (१२) तिरुक्कडित्तानम्, (१३) तिरुवारन्विलै—आरम्मुलै ।

मध्यदेश के २ दिव्यदेश।

(१) तिरुवहीन्द्रपुरम्, (२) तिरुक्कोवलूर ।

तुण्डीरमण्डल के २२ दिव्यदेश ।

(काञ्ची में १४)

(१) हस्तगिरि, (२) अट्टपुयहरम्—अष्टभुज, (३) तिरुत्तण्गा—विलक्कोलिकोयिल्— दीपप्रकाश, (४) वेलुक्कै—आल्लहियशिङ्गर, (५)पाडकम्— पाण्डवदूत, (६) नीरकम्, (७) निलात्तिङ्गल्तुण्डम्, (८) ऊरगम्, (९) तिरुवेक्का— यथोक्तकारी, (१०) कारकम्, (११) कार्वानम्, (१२) तिरुक्काल्वम्, (१३) पवलवण्णम्— प्रवालवर्ण, (१४)परमेश्वरविण्णगरम्— वैकुण्ठनाथ ।

(दूसरे स्थानों में ८ दिव्यदेश)

(१) तिरुप्पुट्कुलि, (२) तिरुनिन्नवूर—तिन्नूर, (३)तिरुवेव्वुल्—तरुवल्लूर, (४) तिरुनीर्मलै, (५) तिरुविडवेन्दै— तिरुविडन्दै, (६) तिरुकडल्मलै— महाबलिपुरम्, (७) तिरुवल्लिकेणि— मदरास् , (८) तिरुक्कडिकै— शोलङ्गिपुरम् ।

उत्तरदेश में ११ दिव्यदेश ।

(१) तिरुवेङ्कडम्– वेङ्कटाचल– बालाजी, (२) शिङ्गवेल्कुन्नम्– अहोवल, (३) तिरुवयोध्ये– अयोध्याजी, (४) नैमिशारण्य, (५) सालग्रामम्– मुक्तिनाथ, (६) बदरिकाश्रम, (७) कण्डमेन्नुम्– कडिनगर– देवप्रयाग, (८)तिरुप्पिरिदि–जोषीमठ, (९) द्वारकाधाम, (१०) वडमदुरे– मधुरा– मथुराजी, (११) तिरुवाय्प्पाडि– गोकुल।

उपर्युक्त दिव्यदेशों के अतिरिक्त अनेक दिव्यदेशों की स्थापनायें उत्तरभारत में आधुनिकसमय में हुई हैं और जिनका हमें पता चला है उन की संख्या ७ है और निम्नलिखित स्थानों पर है—

(१) वृन्दावनधाम में श्रीरङ्गमन्दिर।
(२), (३) पुष्करजी में श्रीरङ्गनाथ दिव्यदेश और श्रीरमावैकुण्ठ का दिव्यदेश।
(४) मारवाड़– रोल में– श्रीरङ्गनाथजी का स्थान।
(५) हैदराबाद में –श्रीवरदराज भगवान् का स्थान।
(६) कन्दिकलमेट में– श्रीरामचन्द्रजी का स्थान। (हैदराबाद)
(७) मोहमयी (बम्बई) नगरी में–श्रीवेङ्कटेशभगवान् का दिव्यदेश।

दिव्यदेशों में मूर्तिविधान ।

दिव्यदेश नामक देवस्थानों के लिये मूर्तिनिर्माण के छ पदार्थ बतलाये गये हे। मृत्तिका, रत्न, लोहा, शिला, लकडी और स्फटिक मणि ये ही छ पदार्थ हे। इन में भी श्वेत, पीतादि मिट्टी, हीरामाणिक आदि रत्न, सोना चाँदी आदि लोहजाति– धातु, शिला और दारु के विषय में भी विधान शास्त्रों में है कि शिला और दारु कहा की किस लक्षण की और किस वृक्ष की लेनी चाहिये इसी प्रकार स्फटिकमणि की भी परीक्षा हे। इतनाही नहीं एक ही दिव्यदेशमन्दिर में छ मूर्तियों का विधान है जो भिन्नभिन्न कार्यों के लिये होती है। उन के

नाम इस प्रकार होते हैं— मूलबेर, उत्सवबेर, स्नानबेर, बलिबेर, शयन बेर, और कर्मार्चा बेर । अभाव में छः के स्थान में तीन या न्यूनाधिक मूर्तियों के रखने की भी आज्ञा है । किन्तु तीन से कम और छः से अधिक मूर्तियों के रखने का विधान नहीं है । दिव्यदेश नामक देव-स्थानों में कुछ ऐसे तीर्थक्षेत्र भी हैं जिन क्षेत्र का नाम ही दिव्यदेश है वहां के किसी स्थान (मन्दिर) विशेष का नाम दिव्यदेश नहीं है और न वहां दिव्यदेश की कोई देवमूर्ति का ही वर्णन है जैसे— " नैमिषारण्य, अयोध्या, मथुरा, गोकुल " आदि तीर्थक्षेत्र ही दिव्य देश हैं इन स्थानों में किसी एक मन्दिर का नाम दिव्यदेश नहीं है और न किसी मूर्तिविशेष को दिव्यदेश की देवमूर्ति ही कहते हैं ।

दिव्यदेशीय मन्दिरों में वामन और परशुराम के अतिरिक्त शेष सभी भगवन्मूर्तियों की स्थापना करने का विधान है क्योंकि ये दोनों अवतार अंशावतार माने गये हैं अतएव इन दोनों ही अवतारों की मूर्तियाँ मूलदेवता के रूप में स्थापित नहीं की जातीं ।

दिव्यदेशीय उत्सव ।

दिव्यदेशीय उत्सव दो प्रकार के होते हैं एकतो वे उत्सव हैं कि जिन के न करने से दोष माना गया है और दूसरे वे हैं कि जिन का होना उत्तम है न होने से प्रायश्चित नहीं करना पडता । ऐसे आवश्यक उत्सव जिन के न करने पर प्रायश्चित करना पडता है वे निम्न लिखित हैं—

१. नित्योत्सव— प्रातःकाल और रात्रि में ।

२. पक्षपर्वोत्सव—

क. दोनों पक्ष की एकादशी के दो उत्सव ।

ख. अमावास्या का उत्सव ।

ग. पूर्णिमा का उत्सव ।

घ. सूर्यसंक्रमण का उत्सव ।

३. ब्रह्मोत्सव वर्ष में एकबार जो ३ से १० दिन तक किया जाता है ।
४. नक्षत्रोत्सव प्रतिमास अवतारनक्षत्र में होता है ।
५. आलवारों के १८ उत्सव जो उन के नक्षत्रों पर होते हैं ।
६. दीपोत्सव जो वृश्चिकसूर्य के कृत्तिकानक्षत्र में होता है ।
७. धनुर्मासोत्सव ३० दिनों का होता है ।
८. अयनोत्सव जो मकर और मेष की संक्रान्ति के दिन होते हैं ।
९. आग्रहायणोत्सव जो मार्गशीर्षमास में होता है ।
१०. महानवमी उत्सव, जो आश्विन शुक्ल नवमी को होता है।
११. उडुपोत्सव—नौका उत्सव जो मकर कुम्भ के सूर्य में होता है।
१२. मृगया– शिकार- उत्सव जो मकरसंक्रान्ति के दिन होता है।
१३. जयन्ती- उत्सव—
 क. श्रीरामनवमी को मेष के सूर्य में ।
 ख. श्रीनृसिंहजयन्ती को वृष के सूर्य में ।
 ग. श्रीकृष्णजयन्ती को सिंह के सूर्य में ।
१४. वसन्तोत्सव, वसन्त ऋतु में ।
१५. ग्रीष्मोत्सव, वृष के सूर्य में अथवा मिथुन के सूर्य में ।
१६. दमनकोत्सव, कुम्भ के सूर्य में ।
१७. कल्हारोत्सव, तुला के सूर्य में ।
१८. चैत्रपूर्णिमोत्सव, चैत्र की पूर्णिमा को ।
१९. दीपमालिकोत्सव, कार्तिक कृष्ण अमावास्या को ।
२०. अध्ययनोत्सव २०दिनों का होता है, वैकुण्ठ एकादशी से पूर्व१०दिन से आरम्भ कर के पश्चात् १० दिनों तक इस प्रकार२०दिनों का उत्सव होता है ।
२१. श्रीलक्ष्मीजी का उत्सव, मीन के सूर्य में ७ अथवा १०दिनों तक का उत्सव होता है और अन्तिमदिन उत्सव का उत्तरफल्गुनी नक्षत्र को होना चाहिये ।

२२. पल्लवोत्सव जो सात दिनों तक होता है और जिस की समाप्ति श्रवण नक्षत्र में होती है ।

आचार्यों और आल्वारों के अवतारोत्सव भी सामर्थ्य के अनुसार किये जाते हैं किन्तु उनके न होने पर प्रायश्चित्त नहीं करना पडता । उक्त उत्सवों के समय की विवेचना यों है ।

(१) श्रीवटुकपूर्णस्वामी का	अवतारोत्सव मेष के सूर्य में	अश्विनीनक्षत्र में
(२) श्रीपुण्डरीकाक्षस्वामी का	" "	कृत्तिकानक्षत्र में
(३) श्रीरामानुजस्वामी का	" "	आर्द्रानक्षत्र में
(४) श्रीमधुरकविस्वामी का	" "	चित्रानक्षत्र में
(५) श्रीगोष्ठीपूर्णस्वामी का	" वृष के सूर्य में	रोहिणीनक्षत्र में
(६) श्रीशैलपूर्णस्वामी का	" "	स्वातीनक्षत्र में
(७) श्रीशठकोपस्वामीका	" "	विशाखानक्षत्र में
(८) श्रीपराशरभट्टारकस्वामी का	" "	अनुराधानक्षत्र में
(९) श्रीवरदनारायणगुरु का (कोइल कन्दाडै अन्नन्)	" "	"
(१०) श्रीविष्णुचित्तस्वामी का	" मिथुन के सूर्य में	स्वातीनक्षत्र में
(११) श्रीकृष्णपादस्वामी का	" "	"
(१२) श्रीमन्नाथमुनि का	" "	अनुराधानक्षत्र में
(१३) श्रीप्रतिवादिभयङ्करस्वामी का	" कर्क के सूर्य में	पुष्यनक्षत्र में
(१४) श्रीगोदाम्बा का	" "	पूर्वफल्गुनीनक्षत्रमें
(१५) श्रीयामुनाचार्यस्वामी का	" "	उत्तराषाढानक्षत्र में
(१६) श्रीपरवस्तु श्रीभट्टनाथस्वामीका	" सिंह के सूर्य में	मृगशीर्षनक्षत्र में
(१७) श्रीकुरुकाधिपस्वामी का	" "	"
(१८) श्रीतोताद्रिस्वामी का	" कन्या के सूर्य में	पुनर्वसुनक्षत्र में
(१९) श्रीवेदान्ताचार्यस्वामी का	" "	श्रवणनक्षत्र में
(२०) श्रीकूरकुलोत्तमदासस्वामी का	" तुला के सूर्य में	आर्द्रानक्षत्र में

(२१) श्रीवरवरमुनिस्वामी का	अवतारोत्सव तुला के सूर्य में		मूलनक्षत्र में
(२२) श्रीविष्वक्सेनजी का	”	”	पूर्वाषाढानक्षत्र में
(२३) श्रीसरोयोगीस्वामी का	”	”	श्रवणनक्षत्र में
(२४) श्रीलोकाचार्यस्वामी का	”	”	”
(२५) श्रीभूतयोगीस्वामी का	”	”	धनिष्ठानक्षत्र में
(२६) श्रीमालाधरस्वामी का	”	”	”
(२७) श्रीमध्यवीधिभट्टारकस्वामी का	”	”	”
(२८) श्रीमहायोगीस्वामी का	”	”	शतभिषानक्षत्र में
(२९) श्रीपश्चात्सुन्दरदेशिकस्वामी	”	”	”
(३०) श्रीदेवराजगुरु का	”	”	रेवतीनक्षत्र में
(३१) श्रीकलिवैरिदासस्वामी का	”	वृश्चिक के सूर्य में	कृत्तिकानक्षत्र में
(३२) श्रीपरकालयोगी का	”	”	”
(३३) श्रीपाणिमुनि का	”	”	रोहिणीनक्षत्र में
(३४) श्रीभक्तांघ्रिरेणुस्वामी का	”	धनु के सूर्य में	ज्येष्ठानक्षत्र में
(३५) श्रीमहापूर्णस्वामी का	”	”	”
(३६) श्रीअभिराम वरगुरुस्वामी का	”	”	”
(३७) श्रीगोविन्दाचार्य स्वामी का	”	मकर के सूर्य में	पुनर्वसु नक्षत्र में
(३८) श्रीभक्तिसारस्वामी का	”	”	मघानक्षत्र में
(३९) श्रीकूरेश स्वामी का	”	”	हस्तनक्षत्र में
(४०) श्रीकुरुकेश स्वामी का	”	”	विशाखानक्षत्र में
(४१) श्रीकाञ्चीपूर्ण स्वामी का	”	कुम्भ के सूर्य में	मृगशिरानक्षत्र में
(४२) श्रीकुलशेखर स्वामी का	”	”	पुनर्वसुनक्षत्र में
(४३) श्रीराममिश्र स्वामी का	”	”	मघानक्षत्र में
(४४) श्रीवेदान्ति मुनि का	”	मीन के सूर्य में	उत्तरफल्गुनीनक्षत्र में
(४५) श्रीरङ्गामृतदेशिक स्वामी का	”	”	हस्तनक्षत्र में

देश के हिन्दूनरेशों के प्रति

मुम्बई का उलहना

(लेखक-पण्डित रङ्गनाथजी द्विवेदी-बुद्धिपुरी)

[१]

यद्यपि हैं नरनाह देश में एक एक से ।
जो हैं जग में चढे चढे अब भी अनेक से ॥
फिर भी जो गुण आर्य नृपों ने दिखलाये हैं ।
वे न आज लौं कहीं दूसरे में पाये हैं ॥

[२]

धीर वीर गम्भीर धर्महित तन को त्यागे ।
सत्यहेतु सर्वस्व तजन में देर न लागे ॥
रचे अनेकन तीर्थ तीर्थसम भवन बनाये ।
सेवा हित जागीर अनेकन वीर लगाये ॥

[३]

जिन के धन सों प्रजाधर्म पालन करती थी ।
जिन के शासन को प्रसन्न है शिर धरती थी ॥
उन्ही की सन्तान उन्ही के सम अधिकारी ।
आज आप बनरहे कहें सब अत्याचारी ॥

[४]

धर्मकर्म में धन लगना तो दूर रहा है ।
कोरा भी सहयोग धर्म में होत कहा है ॥
यदि यह सब कुछ नहीं कौन कारन विसराये ।
आप प्रतिष्ठा के उत्सव में जो नहिं आये ॥

[५]

यद्यपि मैं हू पराधीन परजन सों शासित ।
फिर भी तुम मेरे हो मै हू सदा तवाश्रित ॥

गैरों के अपमान मुझे तो नहिं खलते हैं ।
खलते उन के किये गोद में जो पलते हैं ॥
[६]
देशशक्ति सर्वस्व- अर्थ- शोषक जो शासक ।
उन के जो बन रहे आप नृपदास उपासक ॥
प्रजास्वत्व कर भरभर दोनों हाथ लुटावें ।
दासभक्ति में खर्चकरन को नहिं सकुचावें ॥
[७]
सुनते ही आगमन लाट के देश देश से ।
पांवपियादे दौड़पड़े हों चहे क्लेश से ॥
ऋण ले लेकर आइ आइ के स्वागत करते ।
कभी नहीं हरिलोक और परलोकहि डरते ॥
[८]
हां आते हैं नित्य यहां पै स्वागत करने ।
जो गोरे गोरीजन हाकिम के मन भरने ॥
वे ही मेरे लाल देश के सुयशपताके ।
देश काल संसार कार्य में चतुर चलाके ॥
[९]
सभी सुखों का मूल, जाति का गौरव जो है ।
साधन सुविधाजनक परमपद मग का जो है ॥
एक धर्म है सभी धर्म निन यही पुकारें ।
हा! हिन्दूनरनाह, आज तुम उसे बिसारें ॥
[१०]
नहिं सकुचाते जारज भी गिरजा में जाते ।
यवनों के नरनाह नमाजी बने दिखाते ॥
निजकुल की मर्याद भूलकर आज आप सब ।
धर्मनाम से रहें दूर यह तो तजिये अब ॥

[११]

लखो आज हो रही धर्म में कैसी श्रद्धा ।
देख पडे प्रत्यक्ष देश की श्रद्धा श्रद्धा ॥
फिर भी मेरे आज महोत्सव में नहिं आयें ।
क्यों ? इस का क्या कारण ? मुझ से ठीक बतायें ॥

[१२]

जिन के स्वागत हेतु आज सब देश देश के ।
साधु सन्त गुणवन्त महन्त शुभग वेश के ॥
श्रेष्ठ सेठगन, छाडि छाडि व्यवसाय आगये ।
अपने अपने जीवन का साफल्य पागये ॥

[१३]

फिर भी कोई आज नहीं हिन्दू नरेश है ।
इस स्वागत में मुझे हृदय से बडा क्लेश है ॥
दर्शक बनकर भी यदि कोई आये होते ।
जनसमूह के दर्शनीय दर्शक शुभ होते ॥

[१४]

किया बडा अन्याय न्याय के जाननहारे ।
मुझ दुखिया निज मोहमयी को निरा विसारे ॥
जिन को अपना कहें उलहना होत उन्हीं से ।
जिन की आशा रहे निराशा होत उन्हीं से ॥

[१५]

भूल हुई सो हुई नहीं अब ऐसा करना ।
सदा जाति अरु धर्महेतु जीना वा मरना ॥
देता हू आशीस आप को फिर भी जी सों ।
होहु धर्मरत अरु विजयी हे हिन्दुमहीशो! ॥

[१६]

रहो सदा सम्पन्न मिटे हिय की कमजोरी ।
प्रजाजनों की सदा करो रक्षा बरजोरी ॥
भारत हो स्वाधीन सुखी सत्कर्मधर्ममय ।
वेङ्कटेश भगवान्! प्रजा होवे सब निर्भय ॥

प्रतिष्ठा महोत्सव और धर्मसभायें।

इस शुभ अवसर पर यह भी प्रबन्ध किया गया था कि दिव्य देश मन्दिर में प्रतिदिन दर्शकों के उपदेशार्थ बाहर से आये हुए विद्वानों धर्मोपदेशकों तथा भगवद्भक्तों के व्याख्यान हुआ करें। इस के लिये मन्दिर में दो बजे दिन से सभा होती थी और उस से दर्शकों का एक पन्थ दो काज होता था। साधारणधर्म, श्रीवैष्णवधर्म, और सनातनधर्म के नाम पर बड़े ही गम्भीर व्याख्यान होते थे। और ब्रह्मचर्यादि आश्रमों और ब्राह्मणादि वर्णों की धर्मप्रणाली तथा भगवद्भक्तों के आचार व्यवहार के उपदेश होते थे। उपदेश देनेवालों में निम्नलिखित महानुभावों के नाम उल्लेखनीय हैं —

१. श्रीमान् १००८ श्रीजगद्गुरु महाराज दिव्यदेश के सर्वस्व.
२. श्रीमान् एम्. टी. नरसिंह अय्यङ्गार बी. ए. बेङ्गलोर.
३. " पं. रामकुमारजी शास्त्री, व्याकरणाचार्य—कानपूर.
४. " स्वामी अण्णङ्गराचार्य जी काञ्ची.
५. " विद्याभूषण और साहित्याचार्य पं. बालमुकुन्दाचार्यजी, उज्जैन.
६. " वाणीभूषण महन्तवर पं. लक्ष्मणाचार्य स्वामी, नृसिंह-देवला – मालवा.

७. " आयुर्वेदाचार्य स्वामी पं. यशोदानन्दनाचार्यजी, वृन्दावन- मथुरा.
८ " पं. नृसिंहदत्तजी उपाध्याय, विसौटी-बदायूँ.
९. " पं. यादवप्रसादजी जोशी.
१०. " पं. श्रीधरशर्माजी—पुष्कर.
११. " पं. जगन्नाथप्रसादजी शुक्ल, प्रयाग.
१२. " प. कमलनयनजी शास्त्री—काशी
१३. " सोलापुर के श्रीवैष्णव मण्डली के बालक.

प्रतिष्ठा महोत्सव के समय सभायें बराबर होती रहीं और धार्मिक उपदेशों की झडी लगी रहती थी। उपदेश भी प्रतिष्ठा महोत्सव का एक अङ्ग बनरहा था। योंतो व्याख्यान सभी के उत्तम थे और श्रोताओं के मनोरञ्जन के लिये कोई वक्ता अपनी शक्ति भर उत्तमोत्तम विषयों को वर्णन करने में त्रुटि नहीं करता फिर भी श्रोताओं के मन को आकर्षण करनेवाले व्याख्यान श्री १००८ श्रीजगद्गुरु महाराज के होते थे यह कहना तो सूर्य के सामने दीपक रखना है हां भक्तिरसभीनी कविता और प्रेमप्रवाह में डुबोदेनेवाले व्याख्यान वाणीभूषण और सचमुचवाणीभूषण महन्त पं. लक्ष्मणाचार्यजी स्वामी के होते थे। इसी प्रकार भगवद्भक्ति और गुरुभक्ति विषय में सुन्दर उपाख्यानों के साथ विद्याभूषण और साहित्याचार्य पं. बालमुकुन्दाचार्यजी का व्याख्यान भी बडा ही मनोहर होता था। पाण्डित्यपूर्ण व्याख्याओं में हम कानपूरनिवासी पं. रामकुमारशास्त्रीजी का नाम लिये विना नहीं रह सकते क्योंकि आपने जिस योग्यता से व्याख्यान दिये हैं वह किसी दूसरे व्याकरणाचार्य से आशा करने की बात न थी।

सभाओं का कार्य, प्राय. ज्येष्ठ शुक्ल ७ सोमवार से आरम्भ हुआ और प्रतिष्ठा महोत्सव समाप्त हो जाने पर भी होना ही रहा। दिव्यदेश मन्दिर के अतिरिक्त एक दिन मारवाडी विद्यालय की लाइब्रेरी

के हाल में भी बहुत बड़ी सभा हुई और अनेक विषयों पर व्याख्यान हुए तथा कुछ प्रस्ताव भी स्वीकृत हुए। और पधरावनी के रूप में श्रीवेङ्कटेश्वर प्रेस में भी एक दिन श्रीवैष्णवाचार्यों और विद्वानों की सभा हुई और आमन्त्रित आचार्यचरणों श्रीवैष्णव विद्वानों और भक्तों की यथोचित आर्थिकपूजा की गयी यह सभा वैकुण्ठवासी सेठ खेमराजजी के सुपुत्रों ने श्रीसेठ रङ्गनाथजी [रायसाहब] और श्रीसेठ श्रीनिवासजी ने बड़ी ही भक्तिभावना से की थी। सभाओं का कार्यक्रम अथवा विवरण देना इस स्थल पर आवश्यक नहीं अतएव विवरण न देकर हम कुछ व्याख्यानों के सार देदें तो कदाचित् अनुचित न होगा। किन्तु ज्येष्ठ शुक्ल ११ शनिवार को दिव्यदेश मन्दिर के अन्दर जो सनातन धर्मसभा हुई थी और जिस के नोटिस में मुम्बई के निम्नलिखित सज्जनों के नाम थे उसका विवरण देना भी आवश्यक प्रतीत होता है।

सभा बुलानेवाले निवेदक महानुभावों के नाम ये हैं —

श्रीयुत खेमराज श्रीकृष्णदास.	श्रीयुत वृद्धिचन्द्र वैद्य.
” शिवलाल मोतीलाल.	” चेनीराम जेसराज.
” सनेहीराम जोहारमल.	” गोरखराम साधुराम.
” नोपचन्द मगनीराम.	” शिवनारायण नेमाणी.
” ठाकरसीदास नन्दलाल.	” गुलाबराय केदारमल.
” कल्याणजी करमसी दामसी.	” लवजी मेघजी जे. पी.
” बालूभाई सुन्दरजी.	” समरथराय खेतसीदास.
” आनन्दीलाल हेमराज.	” हीरालाल रामगोपाल.
” खुशालचन्द गोपालदास.	” मुरलीधर लक्ष्मीनिवास हैद्रावादनिवासी.
” रामदयालु घासीराम हैद्राबाद निवासी.	” सीताराम रामनारायण हैद्रावाद निवासी.
” विलासराय शिवरामदास केडिया.	” रामदयाल सोमाणी.

श्रीयुत लच्छीराम चूडीवाला.	श्रीयुत हनुमान प्रसाद पोद्दार.
" मूंगालाल गोइनका.	" फूलचंद मोतीलाल.
" गणेशदास ओंकारमल.	" दुरगादत्त सावलका.
" लछीराम वजाज.	" विश्वम्भरलाल रुइया.
" रामलाल त्रिवेदी.	" केसरीमल आनन्दीलाल.
" मन्नालाल भागीरथ.	" धुडमल वजाज.
" रामकिसनदास सागरमल.	" हरनन्दराय फूलचद.
" रामजीमल वावूलाल.	" फूलचंद मोहनलाल.
" श्रीरामजी मोतीलाल औरङ्गावाद निवासी.	" गणेशीराम मुरलीधर सोलापुर निवासी.
" गोरधनलाल कावरा कुचामण.	

उक्त सनातनधर्म सभा का कार्यारम्भ दिन में ३ बजे से हुआ मन्दिर का आँगन श्रोताओं और दर्शकों से खचाखच भर रहा था। इसी बीच में सभा के मनोनीत सभापति जगद्गुरु श्री १००८ श्री काञ्ची प्रतिवादिभयङ्करमठाधीश्वर और दिव्यदेश के जन्मदाता श्री १००८ श्रीस्वामी अनन्ताचार्यजी महाराज पधारे, उस समय उपस्थित जनता ने आपका जयध्वनि और हर्षध्वनि से स्वागत किया और आप के सभापति के आसन पर विराजजाने पर सभा का यथाक्रम कार्य आरम्भ हुआ। आरम्भ में श्रीस्वामी अण्णङ्गराचार्यजी ने मङ्गलाचरण किया। मङ्गलाचरण हो जाने के पश्चात् वाणीभूषण महन्त लक्ष्मणाचार्यजी ने सेवा धर्म पर संक्षिप्त किन्तु अत्यन्त सुन्दर सारगर्भित और श्रोताओं के चित्त को आकर्षण करनेवाला व्याख्यान दिया। वाणीभूषणजी के पश्चात् हिन्दी के भण्डार भरनेवाले हिन्दी संसार के सुपरिचित पं. द्वारकाप्रसादजी चतुर्वेदी ने सनातनधर्म की रक्षा के विषय में कहते हुए आजकल के विधवाविवाह नाम से द्विजातियों में वर्णसङ्करता फैलानेवाली कुप्रथा का घोर विरोध किया

और इस छूत से बचने का उपदेश दिया और अछूतों को मन्दिरों में प्रवेशकरने की अनधिकार चेष्टा का विरोध करते हुए चतुर्वेदीजी ने कहा कि हम सनातनधर्मावलम्बी अपने मन्दिरों की पवित्रता की रक्षा के इस अधिकार को किसी दशा में भी छोडने के लिये तैयार नहीं हैं। और अन्त में सनातनधर्म की रक्षा के प्रधान अङ्ग गोरक्षा के लिये गोवध बन्द करने की जोरदार अपील की और गोवध बन्दकरने के प्रयत्नों में एक यह भी उपाय बतलाया कि देश के हिन्दूनरेशों के यहां इस के लिये यात्रा की जाय और डेप्यूटेशन भेजेजॉय । सेठ शिवरामजी केडिया ने चतुर्वेदी जी के पक्ष का समर्थन करते हुए कहा कि सनातनधर्म की रक्षा के लिये मुम्बई के सनातन धर्मावलम्बी मारवाडियों की सङ्गठित पञ्चायत स्थापित होनी चाहिये क्योंकि जबतक एकमत होकर हम लोग इस ओर ध्यान नहीं देंगे अब आगे काम नहीं चलेगा । केडिया जी ने गोरक्षा पर बोलते हुए बतलाया कि पहले भारत में ६० करोड गौवें थीं तब देश में रुपये का डेढ मन दूध बिकता था । सन् १९१८ ईसवीय में केवल १२ करोड गौवें रहगयीं और इस समय ३२ करोड आदमियों के बीच भारत में केवल ९ करोड गौवें शेष हैं कहिये बच्चों को दूध कहां से मिले और हिन्दूधर्म की रक्षा कैसे हो ? अब से ५० वर्ष पहले ही एक अमेरिकन ने कहा था कि " भारतवासियों को अपना गोधन नष्ट नहीं होने देना चाहिये नहीं तो उन की शक्ति का क्षय हो जायगा "। केडिया जी के व्याख्यान की ओजस्विता का जनता पर बहुतही अच्छा प्रभाव पडा और उपस्थित मारवाडी समुदाय तो पञ्चायतसङ्गठन आदि सभी विषयों में सहमत दिखायी दिया, हां आगे क्या करेंगे ईश्वर जाने । केडियाजी के पश्चात् पुष्करनिवासी पण्डित श्रीधरशर्मा जी ने आचार्य की महिमा पर बोलते हुए प्राचीनकाल के ऋषिकुल के छात्रों और आज कल के स्कूलों और कालिजों के स्टूडेण्टों की समता में अन्तर दिख-

लाया और छात्रों को प्राचीन सदाचार की ओर ध्यान देने का उपदेश दिया । तत्पश्चात् श्रीयुत एम्. ए. चक्रवर्ती महानुभाव का धर्मस्वरूप के विषय में संक्षिप्त किन्तु गम्भीरतापूर्ण सुन्दर भाषण हुआ । अन्त में सभा के अध्यक्ष के आसन से श्री १००८ श्रीजगद्गुरु श्रीप्रतिवादि भयङ्कर मठाधीश्वर श्रीमदनन्ताचार्यजी महाराज ने सनातनधर्म के स्वरूप और उस की रक्षा के उपाय बतलाने की कृपा की और अपने मधुर संक्षिप्त किन्तु स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य भाषण में महाराज ने कहा कि— " सनातनधर्म की व्याख्या धर्मवाचस्पतियों—धर्माचार्यों ने बनायी है । जबतक धर्म के मूलस्तम्भ का ज्ञान नहीं होगा तबतक धर्म क्या है और अधर्म क्या है इस विषय का यथार्थ ज्ञान नहीं हो सकता । जैनी, बौद्ध, ईसाई, पारसी, मुसल्मान आदि भी अपने अपने मजहब को धर्म कहते हैं और वे लोग हमारे सनातनधर्म को धर्म नहीं मानते । वे लोग तो पशुहिंसा आदि को भी धर्म मानते हैं जिन को हम धर्म नहीं पाप समझते हैं । इस से सिद्ध होता है कि विशेष समाज अपने लिये भिन्नभिन्न रूप से धर्म का स्वरूप मानता है किन्तु सामान्य भाव से सब के लिये साधारणधर्म का स्वरूप एक ही है उस में भिन्नता नहीं होती । लोग धर्म का विचार करते समय अपनी और अपने समाज की सुविधा और असुविधा को देखने लगते हैं यही धर्म के मार्ग में कठिनाई है क्योंकि तुम्हारी सुविधा के लिये धर्म का स्वरूप बदल नहीं सकता । इस पृथिवी पर मनुष्य ही नहीं अनेक प्रकार के जीव हैं उन का उत्पन्न करनेवाला एक कोई होना चाहिये । उस का नाम चाहे मुसल्मान अल्ला कहें, ईसाई गाड कहें और हिन्दू परब्रह्म परमेश्वर या दूसरे और जो जी चाहे कहें परन्तु समस्त संसार का कर्ता धर्ता विधाता सब से परे परमेश्वर ही है । यह भी स्वयंसिद्ध सिद्धान्त है कि ईश्वर में पक्षपात नहीं है फिर संसार में कोई मनुष्य धनाढ्य और कोई दरिद्र, एवं कोई मनुष्य सुखी और कोई दुःखी
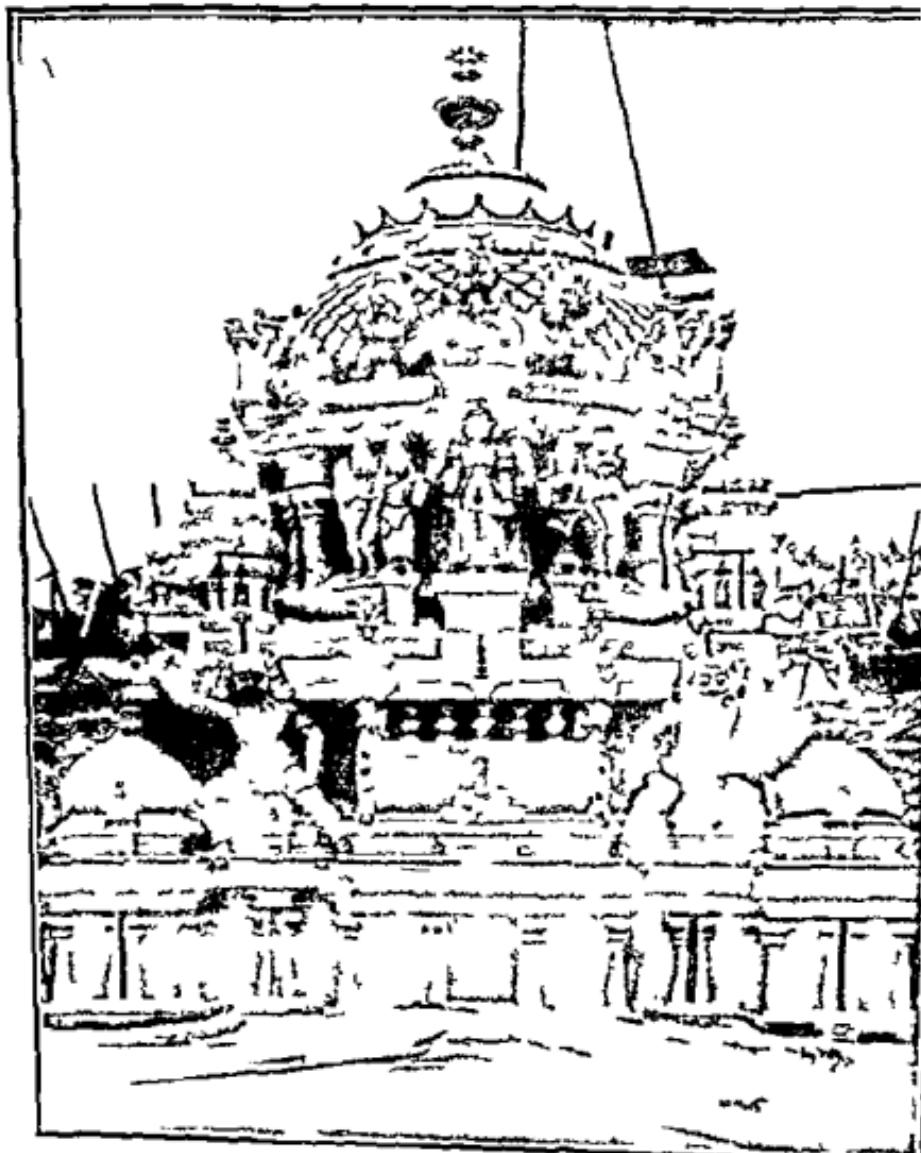
गर्भगृह का शिखर ।

क्यों है! ईश्वर ने सब को समान सुखी क्यों नहीं बनाया क्या ईश्वर अन्यायी और पक्षपाती है? सभी धर्म के अनुयायी कहेंगे कि नहीं, 'कदापि नहीं' ईश्वर में ये दोष नहीं हैं वह निर्दोष हैं फिर बात क्या है? ध्यानपूर्वक विचारिये तो सत्य बात यह है कि ईश्वर अपनी इच्छा से हम संसारी जीवों के लिये कुछ नहीं करता, वह हम को हमारे पूर्वजन्मों के कर्मानुसार धनी अथवा दरिद्र, सुखी अथवा दुःखी बनाता है। संसार में वचन के पाप से पक्षी की योनि में जन्म होता है, मानसदोष से अन्य निरिन्द्रिय योनियों में जन्म होता है इसी प्रकार शारीरिक दोष से वृक्षादि स्थावर योनियों में जन्म मिलता है। हम मनुष्यों को अन्य योनियों की अपेक्षा शारीरिक और मानसिक स्वतन्त्रता मिली हुई है, आज हमें यह अलभ्य मनुष्यजन्म अकारण नहीं पूर्व जन्मों के सुकृतों से ही मिला है। धर्म और अधर्म के जानने का उपाय शास्त्र है। जो कर्म समस्त संसार को धारण करता है जिस कर्म से ही संसार की स्थिति है उसी को "धर्म" कहते हैं। परमेश्वर पूर्णकाम है उसे किसी बात की इच्छा नहीं है वह सर्वव्यापक पूर्णकाम है उसने केवल दूसरे जीवों के उद्धार के लिये ही सृष्टिनिर्माण किया है। हम लोगों को पूर्वजन्मों के शुभाशुभ कर्मों के फल भुगताने के लिये यह मनुष्य जन्म मिला है। एक करोडपति मनुष्य के यदि दश पुत्र हों तो वह अपनी कमायी सम्पत्ति में से चाहे जिस पुत्र को कम या ज्यादा देसकता है किन्तु पैतृक सम्पत्ति में से वह कम ज्यादा मनमानी रीति से दे नहीं सकता। जिस पुत्र ने पिता की आज्ञा मानी उसको प्रसन्न रखा होगा उसको सम्भव है वह अधिक दे और जिस ने आज्ञा नहीं मानी नाराज रखा है उसे कम दे। इनही संसारिक दृष्टान्तों को ईश्वर में लगाओ और तब सब बातें समक्ष में आजाँयगी। ईश्वर से कम या ज्यादा लेना हमारे हाथ है। ईश्वर की आज्ञा का नाम है श्रुति, श्रुति में अदलबदल नहीं हो सकता। श्रुति की आज्ञानुसार परशुराम की तरह

माता का शिर काटना पडे तोभी हिचकिचाना नहीं चाहिये। धर्म अधर्म का निर्णय करना हमारे आधीन नहीं है किन्तु अज्ञानता से हम उसके अर्थ के लिये लडरहे हैं। धर्म का पालन बिना प्रयोजन के नहीं फल की इच्छा से धर्म होता है। अज्ञानता से हम अपनी इच्छा के अनुसार चाहे जिसे धर्म समझलें–कहलें किन्तु यदि वह वस्तुत. धर्म नहीं है तो हमें वही अधर्म का फल मिलेगा और यदि हम श्रुति की आज्ञानुसार उसका ठीक अर्थ समझेंगे तो हमें धर्म का फल मिलेगा क्योंकि फल देनेवाला परमात्मा तो हमारे धर्माधर्म का स्वयं विचार करके फल देगा। फलदेना तो उसी के आधीन है। हमारे लिये मार्ग प्रदर्शक शास्त्रीय अनुष्ठान ही हैं जो धर्म सनातन है उसका फल भी अत्यन्त उत्तम होगा। जहां धर्म और अधर्म में सन्देह हो वहां अपने पूर्वजों, पूर्वाचार्यों के सदाचारों का पालन करना चाहिये इस से कभी तुम्हारा अकल्याण न होगा। ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य वर्ण को शास्त्रों को पढ कर धर्माधर्म समझने का अधिकार है किसी दूसरे से पूछने की कोई आवश्यकता नहीं, स्वयं शास्त्र का अर्थ समझ कर काम करना चाहिये। हमारे पूर्वज धनादि सांसारिक सुखों को तुच्छ मानते थे और आत्मा के कल्याण का उपाय ही मुख्य समझते थे। अब आप आत्मा के कल्याणका भूलकर भी चिन्तन नहीं करते यह बहुत बडी भूल है। देवता अमर हैं परन्तु महाप्रलयकाल में वे भी नहीं रहेंगे फिर जिनका नाम ही "मर्त्य" है उन मनुष्यों का क्या कहना है। मनुष्य की आयु सौवर्ष मानी जाती है मगर वह भी तो घडी घडी घट रही है। मनुष्यजन्म पशुओं के समान शारीरिक सुख के लिये नहीं, सांसारिक स्वार्थसाधन के लिये नहीं, किन्तु पारलौकिक विचार के लिये है। विधवाविवाह का प्रश्न उठाना ही वृथा है। यदि इच्छापूर्ति के लिये ही आप कार्य करना चाहेंगे तो जिस की मद्य पीने की इच्छा हो, मांस खाने का जी चाहे या दूसरों का धन हरण कर धनी बनने का जी चाहे तो क्या धर्मशास्त्र

उन को भी अधर्मपूर्ण इच्छा पूर्णकरने की आज्ञा देंगे, कदापि नहीं। इसलिये इन विषयों को आप क्यों महत्त्व देते हैं । आत्मा के कल्याण के लिये—पूर्वजन्म के अशुभ कर्म के प्रायश्चित्त के लिये विधवाओं का कल्याण तो कामवासनाओं को तिलाञ्जलि देने ही में है। जिस धर्ममार्ग का अनुष्ठान हम आजतक करते आये हैं वही हमारे लिये पालनीय धर्म है । धर्म की व्यवस्था अपने समाज में कायम रखने के लिये ही धर्मविरुद्ध आचरण करनेवालों को उन के उद्धार के लिये ही उन को समुचित दण्ड देने की सुन्दर व्यवस्था करने के लिये संघशक्ति की आवश्यकता है अतएव संघशक्ति का आयोजन करो और अपने समाज और जाति को अधर्म से बचाओ । यदि ऐसी व्यवस्था न की जायगी तो उच्छृंखल होकर जिस को जो काम अच्छा लगेगा वह वही करेगा चाहे वह धर्म हो और चाहे सरासर अधर्म । आशा है आप लोग धर्म अधर्म का मार्ग समझगये होंगे और धर्ममार्ग के पथिक बन अपनी अपनी आत्माओं का कल्याण करेंगे ।

अन्त में सभापति को धन्यवाद देकर जयजयकार के साथ सभा का विसर्जन हुआ । इसी प्रकार सभाए होती रहीं और उन में व्याख्यानों की झडी लगी रही जिन का लिखना यहा सम्भव नहीं किन्तु ईश्वरावतार की महिमा पर श्रीआचार्य चरण ने जो भाषण दिया था और जो प्रत्येक सुधारक को हृदय में रखने योग्य है उस व्याख्यान को हमने इसी अङ्क में अन्यत्र दिया है । इस प्रकार प्रतिष्ठा महोत्सव के अवसर पर धार्मिकसभायें हुईं और दर्शकों को धर्मोपदेश का भी आनन्द मिलता रहा । शुभम् ।

मुम्बई में श्रीवेंकटेश भगवान।

(रचयिता— भिषग्भूषण पं. लक्ष्मणाचार्यजी.)

वत्सलतावश नाथ आप श्री— श्रीपुर से ही आये ।
भूमण्डल के शेषाचल को हर्षित हो अपनाये ॥
शेषाचल में प्रभु विराज कर अति सौलभ्य दिखाये ।
अर्चारूप प्रकट कर अगणित सोये जीव जगाये ॥१॥
दयादृष्टि की वृष्टि अनवरत करके प्रीति पसारी ।
आये चरण शरण में अगणित भावुक हो नरनारी ॥
शेषाचल एकान्त सघन वन दिव्य सुदेश कहावे ।
सुर नर मुनियों को वह पावन हृदयकमल में भावे ॥२॥
सब जीवों को पर न सुलभ वह ऐसी मन में आयी ।
इस ही से श्रीवेंकटेश जी को बम्बई सुहायी ॥
और विशेष सुलभ के कारण प्रभु ने प्रेम बढ़ाया ।
काशी के आचार्य प्रवर के मन का सूत्र हिलाया ॥३॥
कई वर्ष से भव्य सुमन्दिर उन ने शुचि विरचाया ।
अब उस में प्रभु के विराजने का शुभ अवसर आया ॥
ज्येष्ठ शुक्र दशमी तिथि—वासर शुक—सुसमय विचारा ।
गणकों ने सुन्दर सुलग्न में शुभ मुहूर्त निर्धारा ॥४॥
विक्रम संवत् शुचि उन्नीससौ चौरासी (१९८४) सुखदायी ।
हुई प्रतिष्ठा उस दिन विधि से देवों के मन भायी ॥
भारत के मान्य पण्डितगण प्रेमपूर्वक आये ।
द्राविड केरल मलैय्यार के वैदिकता दरसाये ॥५॥
महाराष्ट्र तैलङ्ग सुगुर्जर मालव के मन भाये ।
वृन्दावन काशी प्रयाग के आये मन हर्षाये ॥

मारवाड जगदीशपुरी के सन्त महन्त पधारे ।
हरिजन सदगृहस्थ अनुरागी आये प्रेम पसारे ॥६॥
दल के दल बाहर से आये प्रेमी मात्र लुभाने ।
सेवा धर्म ग्रहण कर प्रमुदित धन्य सुजन्म बखाने ॥
निज मन्दिर की शोभा अनुपम गोपुर की छवि न्यारी ।
विद्युत् रजनी में श्रेणी सह दीप रहीं अतिभारी ॥७॥
श्रीकाञ्ची से देव प्रतिष्ठा के हित आये स्वामी ।
याथ–उक्त–कारी–मङ्गलमय दयासिन्धु प्रभुनामी ॥
किया बम्बई ने जो स्वागत सो सब कहा न आवे ।
जिन ने नयनों से देखा बस उनही के मनभावे ॥८॥
उमँड पडी बम्बई प्रेम से बडी भीड दरशानी ।
सडकों सडकों जयध्वनि ही की गूंज रही थी थानी ॥
करते थे आरती भक्तजन पुष्पहार पहना के ।
फूल लुटाकर भक्ति जताकर जीवन का फल पाके ॥९॥
अस्तु ! यज्ञ मण्डप की रचना किया देख सुख छाया ।
वैदिक विधि की देव प्रतिष्ठा ने मन को उमगाया ॥
लगभग दोसौ विज्ञ विप्रगण मख में डटे हुए थे ।
होम पाठ जप कार्य सभी के विधिवत् बँटे हुए थे ॥१०॥
यज्ञ समय में देवराज भी पतले जलधर लाके ।
मन्द २ जल वर्षाते थे नभ मण्डल में आके ॥
गिरीदशा है तोभी भारत में मख के ज्ञानी हैं ।
परम तपस्वी सन्तोषी द्विज विद्या के दानी हैं ॥११॥
पर ऐसों को ही हा ! कितने क्रूर कोसते ही है ।
गाली देदे धर्म कर्म के स्रोत सोषते ही हैं ॥
विप्रवंश का ऋण सब के ही मस्तक पर है जानो ।
उन के किये हुए उपकारों को हे मानव मानो ॥१२॥

इस प्रकार से हुई प्रतिष्ठा चहुंदिशि मङ्गल छाया ।
श्री श्री वेङ्कटेश करुणानिधि का जयकार सुनाया ॥
दल के दल नरनारी आकर अब दर्शन करते हैं ।
चरण शरण में मस्तक धरकर प्रेम हृदय भरते हैं ॥१३॥
धन्य बम्बई दिव्यदेश जो तू ने इस विधि पाया ।
अपनी प्रेम भक्ति से सादर जीवन सफल बनाया ॥
सेवा शरणागति सब करके हो जावो बस प्रेमी ।
अन्तस्थल में हो अनन्य बस बनो दर्श के नेमी ॥१४॥
जीवन अहा अमूल्य जारहा हरि से प्रीति बढाओ ।
जागृत रहो सदा इस जग में श्रीहरि के गुण गावो ॥
धन्य धन्य श्रीमान् जगद्गुरु पूर्ण तपस्वी ज्ञानी ।
सम दम उपरम और तितिक्षा के धारक शुचि दानी ॥१५॥
जयति अनन्ताचार्य सुगुरुवर धर्म बढानेवाले ।
जयति जयति श्री दिव्यदेश की छटा दिखानेवाले ॥
जयति जयति श्रुति शास्त्र तत्त्व की राह बतानेवाले ।
जयति जयति जय वर्णाश्रम की लाज रखानेवाले ॥१६॥
जयति जयति श्री वेङ्कटेशजी को प्रकटानेवाले ।
जयति जयति हे विद्यावारिधि पाप घटानेवाले ॥
जयति जयति आल्वार सूरीः हरिरूप लखानेवाले ।
जयति जयति आचार्य गणों के कार्य बतानेवाले ॥१७॥
जय मेरे इस हृदयकमल की कली खिलानेवाले ।
जय मङ्गलमय मूर्ति दयामय सुख दरशानेवाले ॥
हे गुरुवर यह दिव्य देश का जो सतसुख दरशाया ।
इस से हम ने आज यहा पर जीवन का फल पाया ॥१८॥

जयति जयति श्री वेङ्कटेश जी अब तो मत तरसावो ।
एक वार भारत में स्वामी फिर वे दिन दिखलावो ॥
घर घर में हो गान आपका शान्ति सदा दरशावे ।
वैदिकता की ध्वजा गगन में अब अखण्ड फहरावे॥१९

—:०:—

ईश्वरावतार की महिमा ।

हिन्दूधर्म के गूढ तत्व ।

श्रीमदाचार्य चरण का उपदेश ।

(सारांश)

उपस्थित सज्जनगण ! आज हम अन्यान्य विषयों को न लेकर प्रस्तुत विषय अर्चावतार पर ही कुछ कहना चाहते हैं । आप जानते है कि भगवान् अपने भक्तों पर अनुग्रह प्रदर्शनार्थ नाना अवतार धारण करते हैं । इनमें तीन प्रकार के अवतार होते है (१) विभवावतार (२) अन्तर्यामी अवतार (३) अर्चावतार । यह तीनों प्रकार के अवतार ही भक्त जनों के उपकार के लिये हैं । अपने भक्तों पर अनुग्रह प्रदर्शित करने के लिये ही भगवान ने रामकृष्णादि अवतार धारण किये थे । कहा जाता है कि रामकृष्णादि अवतार रावण कुम्भकर्ण कसादि राक्षसों के सहार करने के लिये हुए थे, पर यह पूर्णांश में ठीक नहीं है । परब्रह्म ही उत्पत्ति स्थिति और लय करने वाले है । उत्पत्ति के लिये उन्हें कोई विशेष प्रयत्न नहीं करना पडता, स्थिति और लय के लिये भी उन्हें कोई विशेष उद्योग करना आवश्यक नहीं होता । सहार करना कोई ऐसा वडा कार्य नहीं है जिसके लिये प्रभु को

स्वयम् अवतार लेकर शस्त्रास्त्र धारण करने की आवश्यकता प्रतीत हो। जब परमात्मा सृष्टि करते हैं तो कुम्भकार की तरह चक्र मृत्तिकादि सँभालकर नहीं बैठते। वे तो सङ्कल्प मात्र से सृष्टि करते हैं। इसी प्रकार उनकी इच्छामात्र से सारी सृष्टि का अन्त हो जाता है। जिसे समस्त संसार संहार के लिये अङ्गुली हिलाने की आवश्यकता नहीं पड़ती वह रावण कुम्भकर्ण, कंसादि के वध करने के लिये शस्त्रास्त्र सँभालकर स्वयं क्षेत्र में अवतीर्ण हो, यह बात समझ में नहीं आती। गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने श्रीमुख से कथन किया है—

> परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
> धर्म संस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥

अर्थात् साधु जनों के परित्राण, दुष्ट जनों के विनाश और धर्म के संस्थापन के लिये मैं युग युग में अवतार लेता हूँ। इस प्रकार प्रभु के अवतार लेने के—बाह्य दृष्टि से तीन प्रयोजन मालूम होते हैं तथापि तीनों वास्तव में एक ही हैं। एक ही कारण से वे अवतार लेते हैं—और वह एक कारण है साधु जनों के परित्राण का। आप पूछेंगे कि यह कार्य वे इच्छामात्र से क्यों नहीं कर डालते! इस प्रश्न का उत्तर पाने से पहले कुछ सोचलेना आवश्यक है। परित्राण का अर्थ है इष्टवस्तु का देना अनिष्ट का विनाश करना। यह दोनों मिलकर परित्राण कहलाता है। आप फिर पूछेंगे कि यह कार्य वे वहीं बैठे बैठे क्यों नहीं कर डालते वे सर्वशक्ति सम्पन्न हैं। किन्तु सोचिये तो साधु जनों का इष्ट क्या है! आज कल के दिखावटी साधु धन दौलत मान गौरव प्रतिष्ठा आदि माङ्गते हैं, यदि यही सब साधुओं का अभीष्ट हो तब तो इन्हें अवतारलेने की कोई आवश्यकता नहीं है। किन्तु सच्चा साधु न स्वर्ग चाहता है न साम्राज्य चाहता है और न योग की अष्टसिद्धियों की अभिलाषा रखता है वह तो केवल परमात्मा को

परिक्रमा में वासुदेव भगवान ।

ही चाहता है। अब बताइये साधु जनों की इस इष्ट की सिद्धि किस प्रकार हो सकती है ? यह इष्ट केवल अवतार लेने पर ही पूरा हो सकता है। इस लिये भगवान को स्वयम् अवतार लेना पड़ता है ; उन्हें शरीर धारण करना पड़ता है। अवतार लेने पर उनकी इच्छा हुई कि अपने भक्तों को यह दिखला दें कि उनकी रक्षा के लिये हम क्या क्या सहन करने को तैयार हैं। शस्त्रास्त्र धारण कर के शरीर पर शस्त्र प्रहार-सहने को भी तैयार हैं —

वास्तव में देखा जाय तो परमात्मा किसका संहार करे और किसका पालन करे। गीता में भगवान् कहते हैं कि न मेरा कोई शत्रु है और न कोई मित्र है। फिर किसे मारें ?

रावण ने राम का उस समय तक साक्षात् रूप से, कोई अपराध नहीं किया था जब तक राम ने स्वयम् उस से छेड़ छाड़ नहीं की। जब राम वन में गये तो भक्तों ने अपने कष्ट उन्हें सुनाये। उन्हों ने कहा आप हमारे कष्टों को देखें; हमारे यज्ञों में विघ्न किया जाता है और नानाप्रकार के कष्ट हमें दिये जाते हैं। हमारे शरीर सूख कर काटे होगये हैं— केवल अस्थिचर्म अवशिष्ट है। वे भक्तों के कष्ट सहन न कर सके ; उन्हों ने कहा मुनिवेष में होते हुए भी, आप के कष्टों से द्रवीभूत होने के कारण मैं राक्षसों का संहार करूँगा। सीताहरण सूर्पणखा की नाक कटने के पश्चात् हुआ। सच पूछिये तो रावण ने प्रत्यक्षरूप से राम का ऐसा भारी कोई अपराध अन्त तक नहीं किया जिस के लिये उसे प्राणदण्ड देना ही आवश्यक होता। जयन्त ने जगदम्बा सीताजी के स्तन में चोंच मारकर उनका रक्त गिराया था, यह प्रत्यक्ष अपराध था, किन्तु उसे राम ने प्राणदण्ड न देकर क्षमा कर दिया और रावण को क्षमा नहीं किया। रावण ने राम का अपराध नहीं किया था तो भी वह भक्तों को दुःख देनेवाला था। प्रभु को निजभक्त ऐसे ही प्यारे हैं।

भगवान कृष्ण महाभारतीय युद्ध से पूर्व पाण्डवों के दूत बनकर और शांति का सन्देश लेकर हस्तिनापुर गये तो उन्हों ने सब को छोड कर विदुर के घर रूखा-सूखा भोजन किया । उन्हों ने भीष्म, द्रोण, दुर्योधन इत्यादि सब को छोड दिया । इसका कारण पूछने पर दुर्योधन को भगवान कृष्ण ने कहा कि नीति यह है कि शत्रु के घर न स्वयं भोजन करे और न शत्रु को अपने घर भोजन दे। इस पर दुर्योधन ने कहा कि हमारी और आप की शत्रुता कैसी ? आप से हमारी कोई लडाई नहीं और फिर इस समय तो आप दूतरूप से पधारे हैं—आप के लिये तो हम सब ही समान होने चाहिये । फिर शत्रुता कैसी ? भगवान ने उत्तरदिया मेरे भक्तों का शत्रु मेरा भी शत्रु है। भगवान राम ने भी रावण का संहार इसीलिये किया था ।

भगवान अनिष्ट का दूरीकरण इच्छा मात्र से कर सकते थे किन्तु उन्हे यह दिखाना था कि भक्तों के लिये कितना कष्ट उन्हें स्वीकार है । इस लिये युग युग में अवतार लेने के जो तीन कारण बताये हैं उनमेंसे दूसरा कारण उडजाता है । यानी "विनाशाय च दुष्कृताम् " अवतार धारण करने के लिये कोई अनिवार्य प्रयोजन नहीं है । रहा तीसरा प्रयोजन "धर्मस्थापन के लिये "—यह बिल्कुल व्यर्थ है। धर्माचरण पहले ही से होता आता था केवल बीच में राक्षसों के उपद्रव के कारण उस में कुछ गडबडी पैदा हो गयी थी । अतः यह प्रयोजन भी पहले प्रयोजन में ही सम्मिलित है। भगवान पूर्णकाम हैं, उन्हें अपने लिये तो कुछ करने की आवश्यकता है ही नहीं ; वे जो कुछ करते हैं अपने भक्तों के लिये करते हैं। मत्स्य, कच्छ, वराहादि सब अवतार ऐसे ही हुए थे । यह सब अवतार विभवावतार कहलाते हैं ।

पर केवल विभावतारों से ही प्रभु की इच्छा पूरी नहीं हो जाती । प्रभु चाहते हैं कि सब का—समस्त प्राणियों का कल्याण हो । वे सुखी हों, पूर्णानन्द का अनुभव करें । यह कार्य इन थोडे अवतारों से नहीं

हो सकता; ये तो वर्षाकाल की नदियों की तरह हैं जो उस समय पर खूब उमड घुमडकर चलती है और फिर वर्षा के अवसान पर सूख जाती है । अवतार के समय भी अनेक लोगों ने उन्हें पहचाना तक नहीं! किसी ने उन्हें ग्वाल समझा, किसी ने साधारण क्षत्रिय जाना । बहुतसे उनसे खुले रूप में विद्रोह करते रहे । जब भगवान हस्तिनापुर में दूत बनकर गये तो आकाश में देवर्षिगण शान्ति का अमृतमय उपदेश सुनने को एकत्र होगये थे; पर दुर्योधन ने क्या उनका वह उपदेश माना? नहीं, जब उपदेश का असर न हुआ तो भगवान ने सोचा कि थोडी करामात दिखानी चाहिये शायद उसे देखकर ही इस दुर्योधन की बुद्धि ठिकाने आजाय । उन्हों ने अपना विभव दिखलाया और इन्द्रादि सब देवगण सभा में उपस्थित होकर इनकी स्तुति और आरती करने लगे । किन्तु दुर्योधन ने कहा कृष्ण बडा इन्द्रजाली है, यह इन्द्रजाल दिखलाकर हमें ठगना चाहता है — हम इसकी ठगी में नहीं आसकते । वह आसुरी सम्पत्ति में होने के कारण धर्म को अधर्म और अधर्म को धर्म समझता था ।

इससे यह सिद्ध हुआ कि अवतार सर्वजन के उद्धरार्थ होनेपर भी अनेक लोग उनके विरुद्ध भी बने रहे ।

अन्तर्यामी स्वरूप से भगवान सब के हृदयों में निवास करते है । यह इसलिये कि यदि कभी मनुष्य के हृदय में ज्ञान का उदय हो तो वह अन्तर्यामी के दर्शन करसके । किन्तु यह दर्शन कोई सहज बात नहीं है, हृदयस्थ अन्तर्यामी के दर्शन वही कर सकता है जो जितेन्द्रिय हो और योगाभ्यास पूर्वक समाधि रखनेवाला ज्ञानी हो; बडे परिश्रम से वह इस अवस्था को प्राप्त कर सकता है । वह अन्तर्यामी रूप से भीतर इस लिये बैठा है कि यदि सामने प्रकट होजाय तो कोई उन्हें मारने ही दौड पडे— कोई गालिया सुनाये। अत वे चुपचाप सब कुछ देखते रहते है, पर हमारे बीच में दखल नहीं देते । आवश्यकता

के समय वे सत्प्रवृत्ति के सहायक बन जाते हैं। जो हिंसादि छोड़कर सब कुछ भगवच्चरणारविन्द में अर्पित कर देता है — अपना सर्वस्व वासुदेव को समझता है, प्रभु उसे दर्शन देते हैं।

शास्त्रकार कहते हैं कि संसार से विराग हुए बिना परमेश्वर से अनुराग नहीं हो सकता। हृदय में दो बातें नहीं रह सकती हैं? हमें शनैः शनैः साधन करते हुए परमात्मा के दर्शन करने होंगे। पर ऐसे भाग्यशाली मनुष्य संसार में बहुत ही थोड़े होते हैं आज कल तो एक भी नहीं मिल सकते। कहने को तो हम सभी पहुँचे हुए साधु बनते हैं, पर घर दूर है। लोग हठयोग की साधारण क्रियाएं करके समझते हैं कि परमात्मा का दर्शन पा सकेंगे; परन्तु नहीं, हठयोग की नेती धोती आदि क्रियाएं तो प्राथमिक सीढ़ी के समान है। इनसे ईश्वर का दर्शन नहीं हो सकता। आत्मसिद्धि के तो साधन ही दूसरे हैं। सारांश यह कि अन्तर्यामी रूप के दर्शन बड़े कठिन हैं और उनसे सब लोग अपना उद्धार नहीं कर सकते।

अब तीसरे रूप अर्चावतार को लीजिये। प्राणि मात्र का उद्धार करने के लिये भगवान अर्चावतार लेते हैं। अर्चावतार को सामान्य लोग देवमूर्त्ति की—प्रतिमा कह देते हैं। यह अवतार इस लिये है कि जो कोई जहां कहीं, जब कभी जिस रूप में चाहे वह उसी काल में और उसी रूप में दर्शन कर ले। विदेशी और विधर्मी हम पर आक्षेप करते हुए कहते हैं कि हिन्दू लोग ईंट पत्थर मिट्टी को पूजनेवाले हैं, वे ईश्वर वन्दना का रहस्य क्या जानें; निराकार परमात्मा के तो सच्चे उपासक हम हैं। किन्तु विचार कर देखिये तो जो लोग हिन्दुओं पर आक्षेप करते हैं वे भी किसी रूप में कुछ न कुछ रखते हैं। ईसाई क्रास रखते हैं। मुसल्मान पञ्जाह रखते हैं। इसके सिवा एक बात और है, वह यह कि परमात्मा सर्वव्यापक